मासिक समाचारपत्र ● पूर्णांक 7 ● वर्ष 1 ● अंक 7–8 ● मई–जून 2011 ● पाँच रुपये ● बीस पृष्ठ

मज़दूर बिगुल

हज़ारों मज़दूरों ने दी संसद के दरवाज़े पर पहली दस्तक

ऐतिहासिक मई दिवस से मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन के नये दौर की शुरुआत

सरकार ने माँगों पर ध्यान नहीं दिया तो तीन वर्ष बाद दिल्ली में उमड़ेगा मज़दूरों का सैलाब

सम्पादकीय डेस्क

पिछली 1 मई को नई दिल्ली के जन्तर-मन्तर का इलाक़ा लाल हो उठा था। दूर-दूर तक मज़दूरों के हाथों में लहराते सैकड़ों लाल झण्डों, बैनर, तख्तियों और मज़दूरों के सिरों पर बँधी लाल पट्टियों से पूरा माहौल लाल रंग के जुझारू तेवर से सरगर्म हो उठा। देश के अलग-अलग हिस्सों से उमड़े ये हज़ारों मज़दूर ऐतिहासिक मई दिवस की 125वीं वर्षगाँठ के मौक़े पर मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन–2011 के आह्वान पर हज़ारों मज़दूरों के हस्ताक्षरों वाला माँगपत्रक लेकर संसद के दरवाज़े पर अपनी पहली दस्तक देने आये थे।

देश के मज़दूर वर्ग की संसद में बैठने वाले तथाकथित जनप्रतिनिधियों से मज़दूरों ने माँग की कि अगर वे सही मायनों में जनप्रतिनिधि हैं तो मज़दूर वर्ग की लगभग सभी प्रमुख आवश्यकताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली इन जायज़ माँगों को पूरा करें, वरना गद्दी छोड़ दें। इस रैली में मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन की ओर से दीर्घकालिक देशव्यापी 'मज़दूर सत्याग्रह' शुरू करने की घोषणा करते हुए कहा गया कि 26–सूत्री माँगपत्रक की माँगों पर सरकार ने अगर कार्रवाई नहीं की तो औद्योगिक क्षेत्रों, मज़दूर बस्तियों और गाँव-गाँव में मज़दूर पंचायतें करते हुए देश के कोने-कोने में मेहनतकशों को लामबन्द किया जायेगा और तीन वर्ष बाद लाखों की संख्या में मज़दूर दिल्ली को घेरेंगे। यह मज़दूरों के राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों के लिए एक लम्बी लड़ाई की शुरुआत है।

जन्तर-मन्तर पर देश के अलग-अलग हिस्सों से जुटे मज़दूरों की अनुशासित भीड़

दिल्ली के अलग-अलग हिस्सों, पंजाब, गोरखपुर और छत्तीसगढ़ से आये इन हज़ारों मज़दूरों में भारी संख्या छोटे-बड़े कारख़ानों में काम करने वाले असंगठित मज़दूरों की थी। बड़ी संख्या में स्त्री मज़दूर भी दिल्ली और बाहर से आयी थीं। बाहर से आये मज़दूरों की टोलियाँ सुबह से ही लाल झण्डों और नारों की तख्तियों के साथ रेलवे तथा बस स्टेशनों से जुलूस की शक्ल में जन्तर-मन्तर पहुँचने लगी थीं और देर शाम सभा ख़त्म होने के बाद रात तक मज़दूरों की टोलियाँ जन्तर-मन्तर की सड़क पर जगह-जगह बैठकें कर आगे के कार्यक्रम पर चर्चा करती रहीं और मज़दूरों के जाने का सिलसिला रात 9 बजे के बाद तक चलता रहा। सुबह से देर रात तक जन्तर-मन्तर के इलाक़े में मज़दूरों के नारों, गीतों और मज़दूर अधिकारों की बातों की गूँज फैली रही। 'अब चलो नई शुरुआत करो! मज़दूर मुक्ति की बात करो!!' 'मेहनतकश जन जागो, अपना हक़ लड़कर माँगो!' 'अन्धकार का युग बीतेगा! जो लड़ेगा, वो जीतेगा!!' 'मेहनतकश जब भी जागा, इतिहास ने करवट बदली है!' 'मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन का नारा! लड़कर लेंगे अपना हक़ सारा!' जैसे नारे दूर-दूर तक सुनायी देते रहे।

●

मई दिवस 8 घण्टे काम के दिन और इंसान की तरह जीने के हक़ के लिए मज़दूरों के ऐतिहासिक संघर्ष की निशानी है। यह मज़दूरों की मुक्ति की राजनीतिक लड़ाई के इतिहास का मील का पत्थर है। मज़दूर वर्ग ने अपने लाखों शहीदों की क़ुर्बानी देकर और लम्बी तथा कठिन लड़ाइयाँ लड़कर बहुत से अधिकार हासिल किये और कई देशों में अपना राज भी क़ायम किया था। लेकिन 125 साल बाद आज मज़दूरों को फिर से पुरानी हालत में धकेल दिया गया है। आज खुली और नंगी पूँजीवादी लूट चल रही है। कहने के लिए देश में मज़दूरों के लिए 260

(पेज 7 पर जारी)

मालिकान-प्रशासन-पुलिस-राजनेता गँठजोड़ के विरुद्ध गोरखपुर के मज़दूरों के बहादुराना संघर्ष की एक अहम जीत 5

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

आपस की बात

फ़ैक्ट्रियों का कुछ न बिगड़ा और मज़दूरों की बस्तियाँ भी उजाड़ दीं...

दिहाड़ी पर काम करने के लिए ठेकेदार क़रीब 20 मज़दूरों को समयपुर से बवाना औद्योगिक क्षेत्र ले गया था। इनमें मैं भी था। हम लोगों को बवाना औद्योगिक क्षेत्र में फ़ैक्टरी मालिकों द्वारा किये गये अवैध निर्माण को तोड़ना था। अधिकतर फ़ैक्टरी के मालिकों ने फ़ैक्टरी के आगे की ज़मीन क़ब्ज़ा कर रखी थी। दिल्ली विकास प्राधिकरण (डी.डी.ए.) की तरफ़ से पहले से मालिकों को नोटिस मिल चुका था। मगर कम्पनी मालिकों के ऊपर कोई असर नहीं पड़ा। फिर दो महीने बाद डी.डी.ए. ने अवैध निर्माण को तोड़ने के लिए दस्ता भेज दिया। इसमें एक जूनियर इंजीनियर, एक वकील और क़रीब 7 पुलिस कांस्टेबल थे। एक इंस्पेक्टर मोटर साइकिल से था। तोड़ने के लिए ठेकेदार के साथ हम 20 मज़दूर थे। फिर 11 बजे से शुरू हुई नौटंकी। मज़दूरों ने एक फ़ैक्टरी की दीवार पर हथौड़े बरसाना शुरू किया। आधे घण्टे के अन्दर सारे कम्पनी के मालिक और उनके साथ वहाँ के छुटभैये नेता आ गये। हल्ला मचाने लगे क्यों तोड़ रहे हो। जे.ई. की तरफ़ से आदेश हुआ, कोई कुछ भी बोले तुम लोग तोड़ो। हथौड़े बजना शुरू हो गये। मालिक चिल्लाने लगे कि रुको-रुको तुम लोगों को इसे क्या फ़ायदा होगा, बस 5 मिनट के लिए हथौड़े रोक दो, अभी उनसे बात करके मना कराते हैं। सभी मज़दूर भी खूब मज़े ले रहे थे। ओए तोड़ ओए, किसी की नहीं सुननी है। मार दबाके!

इसके बाद जिसकी दीवार टूट रही थी वो जे.ई के पास गया। कुछ बात किया फिर हज़ार-हज़ार के कई नोट उसको पकड़ाने लगा। जे.ई. इशारा करते हुए बोला, रखो-रखो। फिर उसने मज़दूरों को आदेश दिया, चलो यहाँ हो गया, अब आगे वाली फ़ैक्टरी तोड़ो। इस तरह शाम 5 बजे तक चली इस प्रक्रिया में कम से कम 40-50 फ़ैक्टरी में यही हुआ। हथौड़ा बजना शुरू हुआ। मालिक ने 10-20 हज़ार रुपये दिये। बस टूट गया। सारी फ़ाइल ओ.के. हो गयी।

एक जगह तो जे.ई. ने काफ़ी सख्ती दिखायी कि नहीं एक तो फ़ैक्टरी तुड़वानी ही पड़ेगी। एक तो टूटी दिखानी ही पड़ेगी। बहुत ही चिल्ल-पों मचने के बाद जे.ई. ने बड़ी ही कठोरता के साथ आगे का छज्जा तुड़वाकर लटकता हुआ दिखाकर उसके चारो तरफ़ मज़दूरों को हथौड़ा ताने हुए फ़ोटो खिंचवा लिये। वकील ने, जे.ई. ने, और इंस्पेक्टर ने अपने-अपने मोबाइल से फ़ोटो खींची। बाक़ी सारे सिपाही बैठकर चाय-नाश्ता कर रहे थे। 6 घण्टे की इस नौटंकी में क़रीब 50 फ़ैक्टरी की फ़ाइलें ओ.के. हो गयीं। मालिक भी खुश, प्रशासन भी खुश।

मगर साथियो, इसी के उलट जब ग़रीबों-मज़दूरों की ज़िन्दगी भर की खून-पसीने की कमाई से बनाये गये घरों-दुनिया को उजाड़ना होता है तब कोई दया नहीं बख़्शी जाती है। एक दिसम्बर 2009 को कड़ाके की ठण्ड में सूरजपार्क (समयपुर बादली, दिल्ली) की झुग्गियों को तुड़वाने के लिए, उन निहत्थे मज़दूरों के वास्ते 1500 सौ पुलिस और सीआरपीएफ़ के जवान राइफ़ल, बुलेट प्रूफ़ जैकेट, आँसू गैस के साथ तैनात थे। चारों तरफ़ से बैरिकैड बनाकर डी.डी.ए. के आला अफ़सर, स्थानीय नेता, आस-पास के थानों की पुलिस पूरी बस्ती में परेड करते हुए मज़दूरों में दहशत पैदा कर रहे थे। सारे मज़दूर डरे-सहमे हुए, कोई किसी पुलिस वाले का पैर पकड़ रहा है, तो कोई किसी अफ़सर या नेता आगे हाथ जोड़ रहा है। कड़ाके की ठण्ड में उनका दुख देखकर किसी का भी दिल नहीं पसीजता और फिर शुरू होता है तबाही का मंज़र। पाँच इधर से पाँच उधर से बुलडोज़र धड़ाधड़-धड़ाधड़ झुग्गियाँ टूटना शुरू हो गयीं। उन डरे-सहमे मज़दूरों ने अपनी दुनिया को अपने सामने उजड़ते देखा। भगदड़ में कोई आटा घर से निकालकर ला रहा है, कोई चावल, कोई गैस... 3 घण्टे की इस तबाही ने क़रीब 5 हज़ार लोगों की दुनिया उजाड़ कर उनको सड़क पर लाकर खड़ा कर दिया।

जबकि अपने घर बचाने के लिए क्या नहीं किया था इन लोगों ने? 15 दिन पहले नोटिस मिला तो स्थानीय नेताओं से गुहार लगायी। निगम पार्षद के पास गये, सांसद और विधायक के पास गये। डी.डी.ए. के अधिकारियों के पास गये मगर किसी ने कोई सुनवाई नहीं की। फिर एक ठग नेता को सबने 500-500 रुपये (यानी लगभग 5 लाख रुपये) जुटाकर दिये। वह कई सौ लोगों को ट्रकों में भरकर मुख्यमन्त्री शीला दीक्षित के पास ले गया। उनसे मिन्नतें कीं, माता जी कुछ दिन की मोहलत दे दीजिये। ये ठण्ड निकल जाये, फिर हम लोग अपना इन्तज़ाम कर लेंगे। उन्होंने भरोसा दिलाया, जाओ हम कुछ सोचेंगे। मगर फिर 15 दिन में ही ये तबाही!

पाँच हज़ार ग़रीबों की दुनिया इसलिए उजाड़ दी गयी कि कॉमनवेल्थ गेम के लिए वहाँ एक अण्डरपास बनेगा। कामनवेल्थ गेम भी हो गया मगर वो अण्डरपास अभी भी नहीं बना। वो सिर्फ़ एक बहाना था ग़रीबों को उजाड़ने का। उसी साल दिसम्बर 2009 में ऐसी 44 झुग्गियाँ तोड़ी गयीं जिसमें क़रीब 2 लाख लोग सड़कों पर आ गये। इनमें से बहुत तो आज भी सड़कों पर ज़िन्दगी काट रहे होंगे।

ये दो तस्वीरें बहुत कुछ बता देती हैं कि हम किस तरह के समाज में रह रहे हैं। सारी व्यवस्था अमीरों के लिए है, वे जैसे चाहे क़ानून को तोड़-मरोड़कर अपनी जेब में रख सकते हैं। मगर ग़रीबों के लिए क़ानून का मतलब है पुलिस का डण्डा और गोली।

● आनन्द, बादली, दिल्ली

'मज़दूर बिगुल' इण्टरनेट पर भी उपलब्ध है। इस वेबसाइट पर दिसम्बर 2007 से अब तक 'नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल' के सभी अंक, नवम्बर 2010 से आरम्भ 'मज़दूर बिगुल' के अंक और राहुल फ़ाउण्डेशन से प्रकाशित सभी बिगुल पुस्तिकाएँ उपलब्ध हैं। हम 'नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल' के प्रवेशांक से लेकर अब तक के सभी अंक वेबसाइट पर उपलब्ध कराने के लिए काम कर रहे हैं। वेबसाइट का पता :

http://sites.google.com/site/bigulakhbar

'बिगुल' के ब्लॉग पर भी आप इसकी सामग्री पा सकते हैं और अपने विचार एवं सुझाव भेज सकते हैं। ब्लॉग का पता :

http://bigulakhbar.blogspot.com

"बुर्जुआ अख़बार पूँजी की विशाल राशियों के दम पर चलते हैं। मज़दूरों के अख़बार ख़ुद मज़दूरों द्वारा इकट्ठा किये गये पैसे से चलते हैं।" – लेनिन

'मज़दूर बिगुल' मज़दूरों का अपना अख़बार है।
यह आपकी नियमित आर्थिक मदद के बिना नहीं चल सकता।
बिगुल के लिए सहयोग भेजिये/जुटाइये।
सहयोग कूपन मँगाने के लिए मज़दूर बिगुल कार्यालय को लिखिये।

मज़दूर साथियो, 'आपस की बात' आपका पन्ना है। इसमें छापने के लिए अपने कारख़ाने, काम, बस्ती की समस्याओं, हालत के बारे में, अपनी सोच के बारे में या 'बिगुल' के बारे में लिखकर हमें भेजिये।

तृतीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी

विषय – भारत में जनवादी अधिकार आन्दोलन : दिशा, समस्याएँ और चुनौतियाँ

22-23-24 जुलाई 2011, लखनऊ

जनवादी अधिकारकर्मी, सामाजिक कार्यकर्ता, न्यायविद, अकादमीशियन, संस्कृतिकर्मी, मीडियाकर्मी – सभी सादर, साग्रह आमन्त्रित हैं।

संगोष्ठी हेतु अपने आलेख 15 जुलाई तक भेज दें। अपने आगमन और आलेख भेजने की पूर्वसूचना 10 जुलाई तक हमें दे दें।

कई सुप्रसिद्ध जनवादी अधिकारकर्मियों और बुद्धिजीवियों की भागीदारी की स्वीकृति मौखिक रूप से प्राप्त हो चुकी है।

आयोजन स्थल : **वाल्मीकि रंगशाला, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, (निकट भारतीय रिज़र्व बैंक परिसर), विपिन खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ**

अतिथि आवास: **जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय युवा केन्द्र रूमी दरवाज़ा के निकट, चौक, लखनऊ**

मीनाक्षी, प्रबन्ध न्यासी, फ़ोन: 9212511042, ईमेल: meenakshy@arvindtrust.org
आनन्द सिंह, सचिव, फ़ोन : 9689034229, ईमेल : anand.banaras@gmail.com
कात्यायनी, सदस्य, फ़ोन : 9936650658, ईमेल : katyayani.lko@gmail.com
सत्यम, सदस्य, फ़ोन : 9910462009, ईमेल : satyamvarma@gmail.com

अरविन्द स्मृति न्यास

69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
ईमेल: info@arvindtrust.org वेबसाइट: arvindtrust.org

मज़दूर बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियाँ

1. 'मज़दूर बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और सबक़ से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूँजीवादी अफ़वाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'मज़दूर बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मज़दूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'मज़दूर बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी- चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूँजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाज़ों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की क़तारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

मज़दूर बिगुल 'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध है :

- डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020 फोन : 0522-2786782
- जनचेतना स्टाल, काफ़ी हाउस बिल्डिंग, हज़रतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे)
- जाफ़रा बाज़ार, गोरखपुर-273001
- जनचेतना, दिल्ली – फ़ोन : 09910462009
- जनचेतना, लुधियाना – फोन : 09815587807

मज़दूर बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय	: 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006 फोन : 0522-2335237
दिल्ली सम्पर्क	: बी-100, मुकुन्द विहार, करावलनगर, दिल्ली-94, फ़ोन : 011-64623928
ईमेल	: bigul@rediffmail.com
मूल्य	: एक प्रति – रु. 5/- वार्षिक – रु. 70/- (डाक ख़र्च सहित)

पीरागढ़ी अग्निकाण्ड : एक और हादसा या एक और हत्याकाण्ड?

दिल्ली के पीरागढ़ी इलाक़े के उद्योग नगर की एक जूता फ़ैक्टरी पिंकी पोर्च लिमिटेड में 27 अप्रैल को लगी भयानक आग की लपटें कब की बुझ चुकी हैं, मगर इस आग में जलकर राख हुए मज़दूरों की चीख़ें आज भी हवा में गूँज रही हैं। अगर इस हृदयहीन समाज में रहते-रहते किसी का दिल पत्थर का न हो गया हो तो वह उन चीख़ों को सुन सकता है। वे हमसे पूछ रही हैं, "कब तक, आख़िर कब तक कुछ लोगों के लालच की हवस में मज़दूर की ज़िन्दगी इस तरह राख होती रहेगी?"

दो महीने का समय बीत चुका है लेकिन आज भी किसी को यह तक नहीं मालूम कि बुधवार की उस शाम को लगी आग ने कितनी ज़िन्दगियों को लील लिया। पुलिस ने आनन-फानन में जाँच करके घोषणा कर दी कि कुल 10 मज़दूर जलकर मरे हैं, न एक कम, न एक ज़्यादा। बने-अधबने जूतों, पीवीसी, प्लास्टिक और गत्ते के डिब्बों से ठसाठस भरी तीन मंज़िला इमारत के जले हुए मलबे और केमिकल जलने से काली लिसलिसी राख को ठीक से जाँचने की भी ज़रूरत नहीं समझी गयी। मंगोलपुरी के संजय गाँधी अस्पताल के पोस्टमार्टम गृह के कर्मचारी कहते हैं कि उस रात कम से कम 12 बुरी तरह जली लाशें उनके पास आयी थीं। आसपास के लोग, मज़दूरों के रिश्तेदार, इलाक़े की फ़ैक्ट्रियों के सिक्योरिटी गार्ड आदि कहते हैं कि मरने वालों की तादाद 60 से लेकर 75 के बीच कुछ भी हो सकती है। पास का चायवाला जो रोज़ फ़ैक्टरी में चाय पहुँचाता था, बताता है कि आग लगने से कुछ देर पहले वह बिल्डिंग में 80 चाय देकर आया था। सभी बताते हैं कि आग लगने के बाद कोई भी वहाँ से ज़िन्दा बाहर नहीं निकला। कुछ लोगों ने एक लड़के को छत से कूदते देखा था लेकिन उसका भी कुछ पता नहीं चला। फिर बाक़ी लोग कहाँ गये? क्या सारे के सारे लोग झूठ बोल रहे हैं? या दिल्ली पुलिस हमेशा की तरह मौत के व्यापारियों को बचाने के लिए आँखें बन्द किये हुए है?

आख़िर वे थे तो ग़रीब मज़दूर ही न? गिनती थोड़ी कम-बेशी हो जाये तो किसे फ़र्क़ पड़ता है? एक मज़दूर की जान की क़ीमत ही क्या होती है! संसद में सरकार और विपक्ष के बीच खींचातानी चल रही है, मध्यवर्ग के लोग भ्रष्टाचार को लेकर चिन्तित और नाराज़ हो रहे हैं, तरह-तरह की नौटंकियाँ और ड्रामे जारी हैं, इसमें किसे फ़ुरसत है कि कुछ बेचारे मज़दूरों की मौत की सच्चाई का पता लगाये! इतना बड़ा देश है, इतने सारे ग़रीब लोग हैं, और आ जायेंगे उनकी जगह लेने के लिए। प्रोडक्शन चलता रहेगा। आख़िर देश का विकास रुकना तो नहीं चाहिए न?

हमारी जाँच टीम को लोगों ने बताया कि प्लास्टिक के जूते-चप्पल बनाने वाली इस फ़ैक्टरी में क़रीब 150 मज़दूर काम करते थे। 27 अप्रैल को शाम 5.30 बजे छुट्टी होने पर आधे मज़दूर चले गये थे और बाक़ी ओवरटाइम के लिए रोक लिये गये थे। आग कैसे लगी, किसी को नहीं मालूम। आसपास के कई लोग कहते हैं कि पहले नीचे लगी फिर ऊपर फैली। दमकल और पुलिस के अफ़सर कहते हैं कि आग तीसरी मंज़िल से शुरू हुई। जो भी हो, चारों ओर फैले प्लास्टिक के कारण मिनटों में पूरी बिल्डिंग लपटों में घिर गयी। कुछ लोगों का कहना है कि मालिक नरेन्द्र सिंगला शाम को जाते समय बाहर से ताला लगा जाता था। वैसे भी बाहर निकलने का हर रास्ता जूते के डिब्बों और कच्चे माल के ढेरों के कारण बन्द था। खिड़कियों पर लोहे की मोटी जाली लगी थी। आग की भयावह लपटों में घिरे मज़दूर जान बचाने के लिए इधर-उधर भागे होंगे पर चारों ओर लपटों ने रास्ता बन्द कर दिया होगा। कइयों ने रिश्तेदारों-दोस्तों को फ़ोन किया, जल्दी आओ, किसी तरह यहाँ से निकालो। मगर दमकल की गाड़ियाँ दो घण्टे बाद पहुँचीं। तब तक पूरी बिल्डिंग धू-धू करके जल रही थी। अन्दर से चिल्लाने की घुटी-घुटी आवाज़ें आ रही थीं। उस समय वहाँ मौजूद रहे लोगों ने कहा कि अन्दर फँसे मज़दूरों को निकालने की कोशिश में जब कुछ रिश्तेदारों ने फ़ैक्टरी की दीवार तोड़नी शुरू की तो मालिक के कहने पर पुलिस ने उन्हें रोक दिया। आग इतनी भयानक थी कि 25 गाड़ियाँ 12 घण्टे तक बुझाती रहीं। सुबह 7.30 बजे जब आग बुझ गयी तब भी लाशों को ढूँढ़ने का काम शुरू नहीं हो सका क्योंकि पीवीसी की राख तब तक बहुत गर्म थी।

हम लोगों ने उस फ़ैक्टरी में काम करने वाले कुछ मज़दूरों का पता लगाने की काफ़ी कोशिश की लेकिन कुछ लोगों से सिर्फ़ फ़ोन पर बात हो पायी। यहाँ के ज़्यादातर मज़दूर बिहार और उत्तर प्रदेश से आकर काम कर रहे थे। वे दूर-दूर से काम करने आते थे। हमने नाहरपुर जाकर भी बहुत ढूँढ़ने की कोशिश की लेकिन उस विशाल बस्ती में बिना नाम-पते के कुछ भी पता लगाना मुश्किल था। फ़ैक्टरी के आसपास पूछने से पता चला कि सिर्फ़ 22 मज़दूरों के नाम रजिस्टर में थे। बाक़ी ठेकेदार के वर्कर थे जिनका ब्योरा सिर्फ़ कच्चे रजिस्टर में या ठेकेदार के पास होता है। ठेकेदार भी एक नहीं बल्कि कई। पुलिस चाहती तो मालिक, ठेकेदारों और अन्य मज़दूरों से बात करके पता लगा सकती थी, राख और मलबे की जाँच करायी जा सकती थी, लेकिन पुलिस की दिलचस्पी मामले को रफ़ा-दफ़ा करने में ही थी। जाँच होती तो फँसती तो वह भी। कुछ ही महीने पहले इसी फ़ैक्टरी में आग लगी थी। उसके बाद भी दमकल विभाग से नो ऑब्जेक्शन सर्टिफ़िकेट लिये बिना फ़ैक्टरी धड़ल्ले से चल रही थी। इतने इंसानों की जान लेने के बाद भी पुलिस ने मालिक के ख़िलाफ़ महज़ लापरवाही का मुकदमा दर्ज करके अपनी वफ़ादारी साफ़ कर दी।

इस इलाक़े में पिछले तीन महीने में आगज़नी की यह चौथी घटना थी। इससे पहले 15 फ़रवरी को पोलीविनिल क्लोराइड कारख़ाने में आग लगी थी, इसके दस दिन बाद 26 फ़रवरी को एक और जूता फ़ैक्टरी में आग लगी जिसमें एक बच्चे सहित चार लोग मारे गये। फिर 13 मार्च को भी एक जूता फ़ैक्टरी में आग लगी थी। पिंकी पोर्च की घटना भी आख़िरी नहीं है। आगे भी ऐसे हादसे या हत्याकाण्ड होते रहेंगे। पुलिस लीपापोती करती रहेगी, मुख्यमन्त्री और नेता बेशर्मी से जाँच आदि कराने के बयान देते रहेंगे, और दिल्ली की कोठियों और अपार्टमेण्टों में लोग डिनर करते समय टीवी पर इनकी ख़बरों को देखकर कुछ देर तक आह-ऊह करेंगे और फिर चैनल बदल देंगे। यह सब कुछ ऐसे ही चलता रहेगा जब तक ख़ुद मज़दूर भी अपनी जान की क़ीमत पहचानना नहीं शुरू करेंगे।

– बिगुल जाँच टीम

'सरूप सन्स' के मज़दूरों को जुझारू संघर्ष से मिली आंशिक जीत

लुधियाना। बजाज ग्रुप के एक कारख़ाने सरूप सन्स इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड के मज़दूर अपने बुनियादी अधिकारों के लिए संघर्ष की राह पर हैं। इस ऑटो पार्ट्स कारख़ाने में लगभग सवा सौ मज़दूर काम करते हैं जिनमें महिलाएँ भी हैं। यहाँ के मज़दूरों को कुशलता के अनुसार न्यूनतम मज़दूरी, पहचानपत्र, भत्ते, हादसों व प्रदूषण से होने वाली बीमारियों आदि से सुरक्षा जैसे कोई भी बुनियादी अधिकार नहीं दिये गये हैं। इस कम्पनी में श्रम क़ानूनों की कोई जगह नहीं है। कम्पनी की ज़ोर-ज़बरदस्ती के ख़िलाफ़ वैसे तो यहाँ के मज़दूर लम्बे समय से संघर्ष कर रहे हैं लेकिन अब उन्होंने अधिक जुझारू, अधिक सूझबूझ और योजनाबद्ध तरीक़े से संघर्ष की नयी शुरुआत की है।

लगभग छह महीने पहले जब बजाज ग्रुप के अन्य कारख़ानों में मज़दूरों ने संगठन बनाया था, तब से ही इस कारख़ाने के मज़दूर भी एकजुट होकर हक़ हासिल करने का प्रयास कर रहे हैं। चूँकि अन्य यूनिटों में सीटू की यूनियनें बनीं, इस कारख़ाने के मज़दूरों ने भी उसे आज़माया। लेकिन जैसे-जैसे सीटू का दलाल चरित्र नंगा होता गया इस यूनिट के मज़दूरों ने सीटू से अपना पीछा छुड़ा लिया। सितम्बर 2010 में मज़दूरों ने कारख़ाना मज़दूर यूनियन से सम्पर्क किया। अक्टूबर में मज़दूरों ने मालिक द्वारा बोनस में किये जा रहे घोटाले के ख़िलाफ़ कारख़ाना मज़दूर यूनियन के नेतृत्व में दो दिन की हड़ताल की। मज़दूरों की जुझारू एकजुटता के आगे झुकते हुए मालिक को न सिर्फ़ पूरा बोनस देना पड़ा था, बल्कि हर मज़दूर का 200 रुपया वेतन भी बढ़ाना पड़ा था। मज़दूर तब से अपने बुनियादी अधिकारों के लिए बड़े संघर्ष की तैयारी में जुटे हुए हैं।

125वें मई दिवस पर मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन के तहत जन्तर-मन्तर, नई दिल्ली पर हुई रैली में भाग लेने के लिए इस कारख़ाने के मज़दूरों ने प्रबन्धन को 1 मई को छुट्टी करने का नोटिस सौंप दिया था। इससे बौखलाकर मालिक ने 2 मई को कारख़ाने में यह नोटिस लगवा दिया कि अब कारख़ाना आठ घण्टे ही चलेगा। चूँकि यहाँ वेतन बेहद कम मिलता है, इसलिए मज़दूरों को मजबूरन ओवरटाइम लगाना पड़ता है। मालिक और प्रबन्धन ने सोचा था कि ओवरटाइम बन्द करने से मज़दूरों का हौसला टूट जायेगा और वे कभी अपने हक़ के लिए आवाज़ उठाने की हिम्मत नहीं करेंगे। लेकिन मज़दूरों ने ऐलान किया कि जब तक मालिक ओवरटाइम का दोगुना भुगतान और वेतन बढ़ोत्तरी लागू नहीं करता तब तक वे अब ख़ुद ही ओवरटाइम नहीं लगायेंगे। इसके बाद मालिक ने कुछ मज़दूरों को काम से निकालकर उनकी हिम्मत तोड़ने की कोशिश की। निकाले गये मज़दूरों को वापस काम पर लेने के लिए बाक़ी मज़दूरों द्वारा बार-बार माँग किये जाने पर भी जब मालिक राज़ी न हुआ तो मालिकान की ज़ोर-ज़बरदस्ती के ख़िलाफ़ कारख़ाना मज़दूर यूनियन द्वारा एक पर्चा इलाक़े के मज़दूरों में बाँटा गया और समर्थन की अपील की गयी। अगले दिन कारख़ाने के सभी मज़दूर इकट्ठा होकर निकाले गये मज़दूरों को कारख़ाने में ले गये। इससे घबराकर निकाले गये चार मज़दूरों को काम पर रख लिया गया।

इसके बाद मज़दूरों ने वेतन बढ़ोतरी, स्त्री मज़दूरों को बराबर काम का बराबर वेतन, सभी भत्तों को लागू करवाने, पहचानपत्र, सुरक्षा के प्रबन्ध, ओवरटाइम का डबल भुगतान आदि माँगों को लेकर लड़ाई तेज़ कर दी। 21 मई को मालिक को सभी मज़दूरों की ओर से एक माँगपत्र सौंपा गया। माँगपत्र पर कोई सकारात्मक कार्रवाई न होने पर 31 मई को मज़दूरों ने श्रम विभाग पर प्रदर्शन करके कम्पनी के ख़िलाफ़ कार्रवाई और हक़ दिलवाने की माँग की। इस बीच न सिर्फ़ ओवरटाइम लगभग बन्द रहा बल्कि सामान्य दिन का उत्पादन भी डाउन रहा। इस तरह मज़दूरों ने मालिक पर कई तरफ़ से दबाव बनाना जारी रखा। लेबर इंसपेक्टर के कारख़ाने में आने पर मज़दूर प्रतिनिधियों के सामने कम्पनी मैनेजर ने वायदा किया कि कम्पनी में मई महीने से ही न्यूनतम वेतन लागू कर दिया जायेगा, न्यूनतम वेतन या इससे अधिक पाने वाले मज़दूरों के वेतन में भी बढ़ोत्तरी कर दी जायेगी, पहचानपत्र बना दिये जायेंगे, महिलाओं को पक्का कर दिया जायेगा और उनके लिए बराबर काम का बराबर वेतन का नियम लागू किया जायेगा, वेतन पर्ची लागू होगी, पी.एफ़ पर्ची हर महीने देने का नियम लागू कर दिया जायेगा। कम्पनी में पहले यह लागू था कि मज़दूर का वेतन किसी काग़ज़ पर लिखा होता था और उनके हस्ताक्षर किन्हीं और काग़ज़ों पर करवाये जाते थे। माँगपत्र में यह गुण्डागर्दी बन्द करने की भी माँग उठायी गयी थी। अब कम्पनी यह माँग मानने को भी तैयार हो गयी। मज़दूरों को आंशिक जीत प्राप्त हुई। जिन मज़दूरों को 3,850 से नीचे वेतन हासिल हो रहा था, उन सभी का वेतन 3,850 कर दिया गया। सबसे अधिक बढ़ोत्तरी यहाँ काम करने वाली 6 स्त्री मज़दूरों को हासिल हुई। हरेक का वेतन 1,150 रुपये बढ़ गया। बाक़ी मज़दूर जो इससे अधिक वेतन पर काम कर रहे थे, उन्हें 150 रुपये की बढ़ोतरी दी गयी। प्रबन्धन ने पहचानपत्र बनाने के लिए मज़दूरों को फ़ार्म भी बाँट दिये लेकिन मज़दूरों ने फ़ार्म यह कहकर लौटा दिये कि इसमें मज़दूरों की कुशलता (ग्रेड) और काम पर लगने की तारीख़ नहीं दर्ज की गयी है।

हालाँकि यह एक आंशिक जीत ही है क्योंकि अन्य बुनियादी माँगों और सभी श्रम क़ानूनों को लागू करवाने की माँग पर अभी कार्रवाई नहीं हुई है। इन सभी माँगों को लेकर मज़दूरों का संघर्ष अभी भी जारी है। लेकिन मज़दूरों को यह भी समझना होगा कि मालिक हमेशा नयी-नयी चालें चलकर मज़दूरों की एकता तोड़ने की कोशिश करते हैं और मज़दूरों ने संघर्ष करके जो कुछ भी हासिल किया है उसे छीनने का प्रयास करते हैं। इसलिए मज़दूरों को चौकस रहना होगा। यूनियन के काम में जनवाद को मज़बूती से लागू करते हुए लम्बी लड़ाई के लिए एक मज़बूत संगठन का निर्माण करना होगा। साथ ही मज़दूरों को यह भी समझना होगा कि वे सिर्फ़ अपने बलबूते ही लड़ाई को अधिक आगे नहीं बढ़ा सकते। अन्य कारख़ानों के मज़दूरों को साथ में लेना बेहद ज़रूरी है। इसके लिए हालात उनसे गम्भीर प्रयास करने की माँग करते हैं।

बजाज ग्रुप के अन्य कारख़ानों में, जहाँ लगभग 2,000 मज़दूर हैं, बिगुल मज़दूर दस्ता तथा कारख़ाना मज़दूर यूनियन का ख़ासा प्रभाव है लेकिन यूनियन का नेतृत्व सीटू के पास है। मगर सभी मज़दूर इस बात को समझ चुके हैं कि सीटू पूरी तरह से मालिक के इशारों पर काम करती है। 19 मई को कम्पनी द्वारा कुछ मज़दूरों के ओवरटाइम के पैसे में किये गये घपले के ख़िलाफ़ इन सभी मज़दूरों ने अपनी पहल पर ओवरटाइम बन्द कर दिया था।

हम यहाँ यह भी बता दें कि अधिक से अधिक ओवरटाइम लगाने के लिए सीटू नेता ख़ुद मज़दूरों को कहते हैं, यहाँ तक कि ज़बरदस्ती भी

(पेज 19 पर जारी)

मारुति सुज़ुकी के मज़दूरों की जुझारू हड़ताल – कुछ सवाल

मारुति उद्योग, मानेसर के 2000 से अधिक मज़दूरों ने पिछले दिनों एक जुझारू लड़ाई लड़ी। उनकी माँगें बेहद न्यायपूर्ण थीं। वे माँग कर रहे थे कि अपनी अलग यूनियन बनाने के उनके क़ानूनी अधिकार को मान्यता दी जाये। मारुति के मैनेजमेण्ट द्वारा मान्यता प्राप्त मारुति उद्योग कामगार यूनियन पूरी तरह मैनेजमेण्ट की गिरफ़्त में है और वह मानेसर स्थित कारख़ाने के मज़दूरों की माँगों पर ध्यान ही नहीं देती है। भारत सरकार और हरियाणा सरकार के श्रम क़ानूनों के तहत मज़दूरों को अपनी यूनियन बनाने का पूरा हक़ है और जब कारख़ाने के सभी मज़दूर इस माँग के साथ हैं तो इसमें किसी तरह की अड़ंगेबाज़ी बिल्कुल ग़ैरक़ानूनी है। मगर मारुति के मैनेजमेण्ट ने ख़ुद ही गैरक़ानूनी क़दम उठाते हुए यूनियन को मान्यता देने से इंकार कर दिया और हड़ताल को तोड़ने के लिए हर तरह के घटिया हथकण्डे अपनाये। इसमें हरियाणा की कांग्रेस सरकार की उसे खुली मदद मिल रही थी जिसने राज्यभर में पूँजीपतियों की मदद के लिए मज़दूरों का फ़ासिस्ट तरीक़े से दमन करने का बीड़ा उठा रखा है। गुड़गाँव में 2006 में होण्डा के मज़दूरों की पुलिस द्वारा बर्बर पिटाई को कौन भूल सकता है।

4 जून से लेकर 16 जून की रात तक हज़ारों मज़दूर काम बन्द करके गेट के भीतर बैठे रहे। मैनेजमेण्ट ने कारख़ाना परिसर में बिजली और पानी की सप्लाई काट दी और कैण्टीन भी बन्द कर दी। फ़ैक्टरी गेट पर भारी संख्या में पुलिस और मारुति के हथियारबन्द सिक्योरिटी गार्ड तैनात कर दिये गये और मीडिया के लोगों और परिजनों तक को मज़दूरों से मिलने नहीं दिया जा रहा था। लेकिन तमाम कठिनाइयों और बाधाओं के बावजूद मज़दूर डटे रहे। तमाम हथकण्डों और डराने-धमकाने के बावजूद मज़दूर हिम्मत नहीं हारे थे। मगर आख़िरकार 16 जून की आधी रात को उन्हें एक ऐसे समझौते को स्वीकार करना पड़ा जिसमें इतनी लम्बी और कठिन लड़ाई लड़ने के बाद भी वास्तव में उन्हें कुछ भी हासिल नहीं हुआ।

इस समझौते में मज़दूरों की मुख्य माँग यानी अपनी यूनियन की माँग की कोई चर्चा ही नहीं है। जबकि विवाद मैनेजमेण्ट द्वारा मज़दूरों से जबरन इस बात पर दस्तख़त कराने को लेकर शुरू हुआ था कि वे यूनियन नहीं बनायेंगे। एक अन्य माँग ठेका मज़दूरों और अप्रेण्टिस को नियमित करने की माँग का इसमें ज़िक्र भी नहीं है। उल्लेखनीय है कि सैकड़ों की संख्या में ठेका मज़दूर और अप्रेण्टिस भी हड़ताल में शामिल थे। समझौते में इतना हुआ कि हड़ताल के बाद 6 जून को बरख़ास्त किये गये 11 मज़दूरों को वापस ले लिया जायेगा मगर उनके ख़िलाफ़ जाँच करके अनुशासनात्मक कार्रवाई करने की बात भी जोड़ दी गयी है। 13 दिन की हड़ताल के बदले मज़दूरों का 26 दिन का वेतन कट जायेगा और अगर अगले दो महीने के दौरान वे कोई भी "अच्छे आचरण, व्यवहार और अनुशासन का पालन नहीं करेंगे" तो और दो दिन की वेतन कटौती की जा सकती है।

समझौता कराने में अहम भूमिका निभाने वाली एटक, सीटू और एचएमएस जैसी केन्द्रीय यूनियनों के नेता और अक्सर ज़रा रैडिकल तेवर अपनाने वाले, निपट अर्थवादी ट्रेड यूनियनवाद के नये मुल्ले एनटीयूआई आदि संगठन इस समझौते को ही मज़दूरों की जीत के रूप में पेश करने में लगे हैं। इसे हार कहें या जीत, इस सवाल को यहीं छोड़कर हम इस बात पर विचार करेंगे कि क्या इसके सिवा और कुछ हो ही नहीं हो सकता था? हम यह भी देखेंगे कि अगर मारुति के मज़दूरों के समर्थन का दावा करने वाली बड़ी यूनियनें अगर ईमानदारी के साथ ढंग से इस लड़ाई को लड़तीं तो क्या-क्या किया जा सकता था? इसी सवाल के जवाब में पहले सवाल का जवाब भी मिल जायेगा।

एटक के गुड़गाँव ज़िले के महासचिव श्री सचदेवा कह रहे हैं कि इसमें मज़दूरों और मैनेजमेण्ट दोनों की जीत हुई है। एटक के राष्ट्रीय महासचिव गुरुदास दासगुप्ता ने तो यहाँ तक कह दिया कि इस आन्दोलन में यूनियन बनाने का कोई मुद्दा ही नहीं था। उन्होंने टीवी पर फ़रमाया कि मुख्यमन्त्री हुड्डा मज़दूरों के पक्ष में हैं जबकि उसी चैनल की ख़बर के मुताबिक़ हुड्डा ने एक दिन पहले सुज़ुकी कम्पनी के जापानी सीईओ को आश्वासन दिया था कि उनकी सरकार एक कम्पनी में दो यूनियनें बनने की इजाज़त नहीं देगी।

दासगुप्ता जी से कोई पूछे कि अगर यूनियन केवल मज़दूर और श्रम विभाग के बीच का मामला है और मैनेजमेण्ट की इसमें कोई भूमिका ही नहीं होती, तो क्या वजह है कि अकेले गुड़गाँव में ही पिछले कुछ वर्षों के दौरान होने वाले लगभग हर आन्दोलन में यूनियन बनाने के अधिकार का सवाल सबसे प्रमुख मुद्दा बना हुआ है? क्या यही स्थिति लगभग हर औद्योगिक क्षेत्र में नहीं है? क्या मज़दूर इतने भोले हैं कि वे मारुति के मैनेजमेण्ट की इस ज़ुबानी बात पर भरोसा कर लेंगे कि एक बार यूनियन का रजिस्ट्रेशन हो जाये तो मान्यता देने में उसे कोई परेशानी नहीं है? क्या ये वही मैनेजमेण्ट नहीं है जिसने 2000 में गुड़गाँव प्लाण्ट में हड़ताल टूटने के बाद वहाँ की 'मारुति उद्योग इम्प्लाइज़ यूनियन' को बरबाद कर अपनी पिट्ठू यूनियन 'मारुति उद्योग कामगार यूनियन' बनवायी थी? वैसे पहला सवाल तो यही है कि क्या यह मैनेजमेण्ट यूनियन का रजिस्ट्रेशन ही होने देगा? हुड्डा जी ने जापानी सीईओ को तो आश्वासन दे दिया है कि उनकी सरकार ऐसी नौबत नहीं आने देगी कि एक कम्पनी में दो यूनियनें हो जायें।

दरअसल, इन बड़ी यूनियनों ने कभी भी ईमानदारी से इस संघर्ष का साथ दिया ही नहीं। उन्होंने 5 जून को मारुति के गेट पर एक प्रदर्शन तो किया मगर जैसे ही उन्हें लगा कि मज़दूर लम्बी लड़ाई लड़ने के लिए तैयार हैं वैसे ही वे किनारा कर गये और केवल अख़बारी बयानबाज़ी तक सिमट गये। कई दिन बाद जाकर उन्होंने दो घण्टे की टूलडाउन हड़ताल का नोटिस दिया लेकिन मुख्यमन्त्री के कहने पर उसे दो-दो बार स्थगित किया और फिर 20 जून तक टाल दिया। वे अच्छी तरह जानते थे कि तब तक हड़ताल को ख़त्म करा दिया जायेगा। पूरे गुड़गाँव इलाक़े में मज़दूरों को आन्दोलन के बारे में बताने और उनका समर्थन जुटाने के लिए कुछ नहीं किया गया। एक पर्चा और पोस्टर तक नहीं निकाला गया। गेट मीटिंगें करने की घोषणा बस अख़बार के पन्नों पर ही रह गयी। मारुति और जापान की सुज़ुकी कम्पनी पर तथा हरियाणा सरकार पर जन दबाव बनाने के लिए कोई अभियान नहीं चलाया गया।

अगर ये बड़ी-बड़ी यूनियनें अपनी ताक़त का एक छोटा-सा भी हिस्सा हड़ताल के समर्थन में लगा देतीं और दूसरे कारख़ाने के मज़दूरों को भी उनके पक्ष में गोलबन्द करतीं, बाहर रह गये मारुति की सी शिफ़्ट के मज़दूरों को और मज़दूरों के परिवारों को लेकर गेट पर धरना-प्रदर्शन आयोजित करतीं और देश तथा दुनिया के तमाम सामाजिक कार्यकर्ताओं, ट्रेड यूनियन कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों से कम्पनियों तथा सरकार पर दबाव डालने के लिए अभियान चलातीं तो इसका बहुत अधिक असर होता। तब कम्पनी तथा सरकार के लिए मज़दूरों को इस तरह से दबाकर उनकी कोई भी माँग माने बिना हड़ताल तोड़ देना आसान नहीं होता। गोरखपुर जैसे छोटे से शहर के मज़दूर आन्दोलन का अनुभव इसका गवाह है। बिगुल के इसी अंक में छपी इसकी रिपोर्ट देखें। गुड़गाँव ही नहीं, सारे देश के मज़दूरों से आज यूनियन बनाने का हक़ छीना जा रहा है ताकि मज़दूर अपने शोषण और लूट के ख़िलाफ़ एक होकर आवाज़ भी न उठा सकें। इसीलिए मारुति के मज़दूरों की लड़ाई हर मज़दूर के हक़ की लड़ाई है। इस बात को अगर ढंग से तमाम मज़दूरों के बीच ले जाया जाता तो इसे एक व्यापक संघर्ष का रूप भी दिया जा सकता था। तब मारुति के मज़दूरों के संघर्ष को भी और ताक़त मिल जाती।

वैसे गुरुदास दासगुप्ता जी से यह भी पूछा जा सकता है कि अपनी पार्टी के तथा सीपीएम आदि वाम पार्टियों के संसद सदस्यों को लेकर आपने मारुति के गेट पर धरना क्यों नहीं दिया? इसका कितना असर होता, यह बताने की जरूरत नहीं। आख़िर ये सारे सांसद अपने को मज़दूरों का प्रतिनिधि कहते हैं और लाल झण्डा दिखाकर ही वोटों की कमाई करते हैं। मगर ये सब करना न तो अब इन नक़ली वामपन्थियों के बूते की बात है और न ही उनकी ऐसी नीयत है। मज़दूरों के हितैषी के भेस में ये मज़दूर आन्दोलन के सबसे बड़े गद्दार हैं। ये पूँजीपतियों के हितों के रक्षक हैं और पूँजीवाद की दूसरी रक्षापंक्ति की भूमिका संसद से लेकर सड़क तक बखूबी निभा रहे हैं।

कई दिनों तक इन्तज़ार करने के बाद, बिगुल मज़दूर दस्ता और उसकी पहल पर बने 'मारुति सुज़ुकी के आन्दोलन के समर्थन में नागरिक मोर्चा' ने अपनी ओर से अभियान शुरू भी कर दिया था। दस्ता के कार्यकर्ताओं ने मानेसर और गुड़गाँव में मज़दूरों के बीच सभाएँ करके पर्चे बाँटने शुरू किये थे। इससे बौखलाये मारुति के मैनेजमेण्ट ने सिक्योरिटी गार्डों और गुण्डों को भेजकर कार्यकर्ताओं पर अलियर, मौलाहेड़ा आदि स्थानों पर हमले भी कराये लेकिन इस पर भी इन यूनियनों ने अपनी चुप्पी नहीं तोड़ी। हमने देश भर से और पूरी दुनिया से समर्थन जुटाना भी शुरू कर दिया था। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

हम मारुति के मज़दूरों को इस बहादुराना संघर्ष के लिए सलाम करते हैं और साथ ही अपील करते हैं कि इसके अनुभवों से सबक़ लेकर वे आगे अपने हक़ों की सुरक्षा के लिए कमर कसकर तैयार रहें।

– विशेष संवाददाता

हरसूर्या हेल्थकेयर, गुड़गाँव के मज़दूरों का संघर्ष और हिन्द मज़दूर सभा की समझौतापरस्ती

गुड़गाँव। हरसूर्या हेल्थकेयर (फ़ेज़ 4, उद्योग विहार) के 640 मज़दूरों ने पिछले दिनों एक जुझारू लड़ाई लड़ी।

यह कम्पनी डिस्पोज़ेबल सीरिंज बनाने वाली एक बड़ी ब्राण्ड है जिसका वार्षिक कारोबार क़रीब 1300 करोड़ रुपये का है और 40 देशों में वितरण नेटवर्क है। वैसे तो यह कम्पनी दावा करती है कि उसे "अपने कामगारों की गुणवत्ता पर गर्व है" लेकिन इसके कामगारों की हालत क़तई गर्व करने लायक़ नहीं है। गुड़गाँव में दवा और चिकित्सा उपकरण बनाने वाली रैनबैक्सी, मेडिकिट जैसी कई बड़ी कम्पनियाँ हैं जो वैश्विक बाज़ार के लिए उत्पादन करती हैं। इन सभी में मज़दूरों की हालत लगभग एक जैसी ही है।

बुरी तरह शोषण और काम की बेहद ख़राब परिस्थितियों के विरुद्ध हरसूर्या के मज़दूरों ने फ़रवरी में यूनियन बनाकर अपनी माँगें उठायी थीं जिनमें ठेका और कैजुअल मज़दूरों को स्थायी करना, मज़दूरी बढ़ाना, ईएसआई-पीएफ़ की सुविधा देना, काम की अमानवीय परिस्थितियों में सुधार करना और फ़ैक्टरी में क़दम-क़दम पर होने वाली निगरानी और जासूसी का विरोध करना शामिल था। कम्पनी ने ज़बरदस्ती मैक्स नामक एक बीमा कम्पनी से मज़दूरों का बीमा भी करवाया था जिसके लिए उनसे हर महीने कटौती की जाती थी। यह कम्पनी मज़दूरों की गाढ़ी कमाई के रुपये लेकर भाग गयी थी। 12-12 घण्टे काम करके ये मज़दूर मुश्किल से 4000-4500 रुपये महीना कमा पाते हैं। काम की तेज़ रफ़्तार के कारण आयेदिन दुर्घटनाएँ होती रहती हैं।

इन्हीं हालात के ख़िलाफ़ मज़दूरों ने आवाज़ उठायी तो मैनेजमेण्ट ने यूनियन के 7 पदाधिकारियों को निलम्बित कर दिया। इसके विरोध में मज़दूरों ने 11 अप्रैल से काम बन्द कर दिया और फ़ैक्टरी के अन्दर ही बैठ गये। 5 दिन तक वे अन्दर ही रहे। मैनेजमेण्ट ने पानी, बिजली बन्द कर दिया और भीतर खाना पहुँचाने पर भी रोक लगाने लगा। इसके बाद 9 और मज़दूरों को निलम्बित कर दिया गया।

17 दिन तक 300-300 मज़दूर पारी बाँधकर दिनो-रात धरने पर बैठे रहे। इस बीच कम्पनी के भाड़े के गुण्डों ने उन पर हमला करके कई मज़दूरों को मारा-पीटा भी लेकिन मज़दूर डटे रहे। 25 अप्रैल को मालिक ने ट्रेडयूनियन के नेताओं को वार्ता के लिए अन्दर बुलाया और उसी बीच भारी संख्या में पुलिस ने एकाएक धावा बोलकर ज़बरदस्त लाठीचार्ज किया जिसमें 6 मज़दूर बुरी तरह घायल हो गये और कई अन्य को चोटें आयीं। यह सब इसीलिए किया गया था ताकि मालिक को फ़ैक्टरी के अन्दर तैयार माल ट्रकों में भरकर निकाल ले जाने का मौक़ा मिल जाये।

संघर्ष की शुरुआत फ़ैक्टरी के एक सुपरवाइज़र और मज़दूर नेताओं के बीच हुई बहस के बाद मालिक द्वारा चार यूनियन नेताओं को निलम्बित करने से हुई थी। एक मज़दूर के अनुसार बहस का मुद्दा यह था कि मालिक की तरफ़ से ट्रेडयूनियन के नेताओं पर यह आरोप लगाया जा रहा था कि मज़दूरों को स्थायी करने की माँग को दबाने के लिए उन्होंने मालिक से पैसे की माँग की थी। इस मज़दूर ने बताया कि फ़ैक्टरी में मज़दूरों के संगठित होने से उनकी ताक़त बढ़ गयी थी और इस एकता को तोड़ने के लिए मालिक ने यह अफ़वाह फैलायी थी।

इस घटना के बाद होना तो यह चाहिए था कि संघर्ष को और व्यापक और तेज़ बनाया जाता लेकिन वार्ता के लिए गये हिन्द मज़दूर सभा (एचएमएस) के नेताओं ने मालिक के साथ एक शर्मनाक समझौता करके आन्दोलन वापस ले लिया। बातचीत में एक मज़दूर देवेन्द्र ने बताया कि मज़दूर तो लड़ने को तैयार थे लेकिन यूनियन के नेता समझौता करने पर तुले हुए थे।

(पेज 17 पर जारी)

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन

मालिकान-प्रशासन-पुलिस-राजनेता गँठजोड़ के विरुद्ध गोरखपुर के मज़दूरों के बहादुराना संघर्ष की एक और जीत

गोलीकाण्ड, बर्बर लाठीचार्ज, गिरफ़्तारियों, फ़र्ज़ी मुक़दमों, धमकियों से जूझकर मज़दूरों ने लुटेरों के गँठजोड़ को पीछे धकेला

महीनेभर तक चले आन्दोलन में मज़दूरों ने अपनी फ़ौलादी एकजुटता, सूझबूझ और गँठजोड़ के हर हमले के जवाब में संघर्ष के नये-नये तरीक़े ईजाद करने की क्षमता की मिसाल पेश की

गोरखपुर में दो वर्ष पहले औद्योगिक मज़दूरों ने संगठित होकर मालिकों से अपने हक़ माँगने की शुरुआत की थी। इसके साथ ही गोरखपुर के तमाम पूँजीपति, प्रशासन और पुलिस के आला अफ़सर और तथाकथित जनप्रतिनिधि इस तरह भड़क उठे थे

ज़िला अस्पताल में कुछ घायल मज़दूर

जैसे मज़दूरों ने कोई भयानक गुनाह कर दिया हो। दमन और उत्पीड़न के साथ ही आन्दोलन को बदनाम करने के लिए उसके ख़िलाफ़ आरोपों और कुत्साप्रचार की आँधी खड़ी कर दी गयी थी। महीनों तक हर हमले का सामना करके मज़दूरों ने अपनी एकता और सूझबूझ के बल पर कई अहम जीतें हासिल की थीं। लेकिन मालिक घायल साँप की तरह मज़दूरों से बदला लेने की फ़िराक़ में थे। मज़दूर लड़कर अपने हक़ ले लें और उनके दिलों से मालिक का ख़ौफ़ ही ख़त्म हो जाये, यह बात उन्हें हज़म ही नहीं हो रही थी।

ऐसे में जब गोरखपुर के मज़दूरों ने 'मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन' से जुड़कर अपनी माँगों को और व्यापक फलक पर उठाना शुरू किया तो गोरखपुर के पूँजीपति-प्रशासन-पुलिस-नेताशाही गँठजोड़ का बौखलाना स्वाभाविक था। लेकिन किसी को यह अनुमान नहीं था कि मज़दूरों से नफ़रत को वे इस हद तक ले जायेंगे कि उन पर गोलियाँ बरसाने लगें।

मालिकों की तमाम कोशिशों और प्रशासन की धमकियों के बावजूद गोरखपुर से क़रीब 2000 मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन की पहली मई की रैली में भाग लेने दिल्ली पहुँच गये। इनमें बरगदवाँ स्थित अंकुर उद्योग लिमिटेड नामक यार्न मिल के सैकड़ों मज़दूर भी थे। यह वही मिल है जहाँ 2009 में सबसे पहले मज़दूरों ने संगठित होने की शुरुआत की थी। दिल्ली से लौटकर उत्साह से भरपूर मज़दूर 3 मई की सुबह जैसे ही काम पर पहुँचे, उन्हें अंकुर उद्योग के मालिक अशोक जालान की ओर से गोलियों का तोहफ़ा मिला। पहले से बुलाये भाड़े के गुण्डों ने मज़दूरों पर अन्धाधुँध गोलियाँ चलायीं जिसमें 19 मज़दूर और एक स्कूल छात्रा घायल हो गये। दरअसल यह सब मज़दूरों को "सबक़ सिखाने" की सुनियोजित योजना के तहत किया गया था। फ़ैक्टरी गेट पर 18 अगुवा मज़दूरों के निलम्बन का नोटिस चस्पाँ था। मालिकान जानते थे कि मज़दूर इसका विरोध करेंगे। उन्हें अच्छी तरह कुचल देने का ठेका सहजनवाँ के कुख्यात अपराधी प्रदीप सिंह के गैंग को दिया गया था।

लेकिन मालिकों की चाल उल्टी पड़ गयी। मज़दूर चुप होकर बैठ नहीं गये। उन्होंने सड़कों पर उतरकर लम्बी लड़ाई लड़ी। बर्बर दमन और उत्पीड़न के बावजूद पूरे महीनेभर मज़दूरों का आन्दोलन जारी रहा और एकजुट संघर्ष की बदौलत मज़दूरों ने मालिकों, प्रशासन और नेताशाही के गँठजोड़ को पीछे हटने तथा अपनी अधिकांश माँगें मानने पर मजबूर कर दिया। पुलिस और प्रशासन के दमन के जवाब में मज़दूरों ने 'मज़दूर सत्याग्रह' का रास्ता अपनाया

3 मई के गोलीकाण्ड के बाद पुलिस और ज़िला प्रशासन ने बेशर्मी से मालिकान का पक्ष लेते हुए हमलावरों को बचाने और उल्टे मज़दूर नेताओं को ही फँसाने की पूरी कोशिश की, लेकिन मज़दूरों की एकजुटता और बार-बार दमन के बावजूद पीछे न हटने के चलते आख़िरकार 10 मई को प्रशासन ने मालिक पर दबाव डालकर अंकुर उद्योग का बन्द कारख़ाना शुरू कराने और सभी निलम्बित मज़दूरों को वापस लेने का समझौता कराया। कई हमलावरों को गिरफ़्तार भी किया गया लेकिन बाद में उन सबको छोड़ दिया गया। दोषियों को सज़ा दिलाने और मुआवज़े की माँगों को लेकर मज़दूरों की लड़ाई अब भी जारी है।

इसके तुरन्त बाद ही मज़दूरों ने बरगदवाँ इलाक़े के ही दो अन्य कारख़ानों वी.एन. डायर्स यार्न मिल और वी.एन. डायर्स कपड़ा मिल में 10 अप्रैल से चली आ रही तालाबन्दी तथा 18 मज़दूरों के निलम्बन और निष्कासन को लेकर 'मज़दूर सत्याग्रह' का दूसरा चरण छेड़ दिया। आमरण अनशन, बर्बर लाठीचार्ज और गिरफ़्तारियों के सिलसिले के बाद आख़िरकार 2 जून को मज़दूरों को फिर जीत हासिल हुई और सभी मज़दूरों को वापस लेने तथा तालाबन्दी ख़त्म करने का समझौता हुआ।

घटनाक्रम

दिल्ली से लौटने के बाद 3 मई को सुबह की पारी के मज़दूर काम के लिए छह बजे फ़ैक्टरी पहुँचे, तो फ़ैक्टरी गेट पर 18 मज़दूरों को निलम्बित किये जाने का नोटिस लगा था। इसके विरोध में मज़दूर अन्दर न जाकर पास के एक लीची बग़ीचे में जमा हो गये। इसी बीच, मज़दूरों को पता चला कि फ़ैक्टरी के अन्दर मालिक अशोक जालान के बेटे अंकुर जालान तथा और भूतपूर्व छात्र नेता और हिस्ट्रीशीटर प्रदीप सिंह के साथ हथियारों से लैस क़रीब 70 से 80 बाहरी लोग मौजूद हैं। मज़दूरों ने इसकी सूचना सुबह सात बजे सी.ओ. गोरखनाथ को मोबाइल पर, और लगभग साढ़े आठ बजे एसएचओ चिलुआताल थाना तथा 100 नम्बर पर दे दी। लगभग सात बजे संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा के नेता प्रशान्त मज़दूरों के पास पहुँचे। इसी बीच कुछ हथियारधारी लोगों के साथ हिस्ट्रीशीटर प्रदीप सिंह वहाँ पहुँचा और मज़दूर नेता तपीश मैन्दोला के बारे में पूछताछ करने लगा। तपीश को वहाँ न पाकर ये लोग प्रशान्त को ज़बरदस्ती फ़ैक्टरी के अन्दर ले जाने लगे, लेकिन काफ़ी तादाद में मौजूद मज़दूरों ने उन लोगों को वहाँ से खदेड़ दिया। इसके बाद, सभी हथियारबन्द लोग भागकर फ़ैक्टरी के अन्दर चले गये, और वहाँ से ताबड़तोड़ गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं जिसमें 19 मज़दूर और एक स्कूली छात्रा घायल हो गये। घायलों में एक मज़दूर पप्पू जायसवाल के पेट और पैर में दो गोलियाँ लगीं और पेट की गोली रीढ़ की हड्डी तक चली गयी जिसके कारण उनकी स्थिति और अधिक गम्भीर हो गयी। बाक़ी मज़दूरों को हाथ, पैर, पेट और सिर में गोली या छर्रे से चोटें लगीं। मज़दूरों के अनुसार फ़ायरिंग से पहले दो मोटरसाइकिल सवार सिपाही भी फ़ैक्टरी में पहुँचे थे, पर फ़ायरिंग शुरू होते ही वे भागकर छिप गये। सूचना मिलने के क़रीब एक घण्टे बाद लगभग साढ़े नौ बजे एसएचओ चिलुआताल थाना, एसपी सिटी और सीओ मौक़ास्थल पर पहुँचे, और 15 एकड़ क्षेत्रफल में फैले अंकुर उद्योग लिमिटेड की छानबीन महज आधे घण्टे में कर ली गयी।

इसके बाद मालिकान के साथ पुलिस और ज़िला प्रशासन की मिलीभगत तथा उन्हें स्थानीय जन-प्रतिनिधियों की खुली सरपरस्ती की वही कहानी दोहरायी गयी जिसे गोरखपुर के मज़दूर दो वर्ष से बार-बार देखते रहे हैं।

मज़दूरों ने कारख़ाने को घेर लिया था और अपराधियों को भागने नहीं दे रहे थे। लेकिन पुलिस ने गिरफ़्तारी के बहाने उन्हें वहाँ से सुरक्षित निकाला और बाद में छोड़ दिया। प्रदीप सिंह और हथियार समेत कई अन्य अपराधियों को किसी दूसरे रास्ते से भगा दिया गया। पुलिस अपराधियों

(पेज 6 पर जारी)

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन

(पेज 5 से आगे)

का एक भी हथियार बरामद नहीं कर पायी। जिन गाड़ियों में बैठकर अपराधी अन्दर गये थे, वे फ़ैक्टरी परिसर में मौजूद होने के बावजूद पुलिस ने किसी गाड़ी को ज़ब्त नहीं किया। मज़दूरों द्वारा नामज़द रिपोर्ट के बावजूद पुलिस ने अशोक जालान और उसके बेटे को नहीं पकड़ा बल्कि उसकी ओर से मज़दूरों के ख़िलाफ़ एक फ़र्ज़ी एफ़आईआर भी लिख ली।

मज़दूर सत्याग्रह

इस बर्बर हमले और प्रशासन की अन्धेरगर्दी के ख़िलाफ़ मज़दूरों ने रात को ही ज़िलाधिकारी कार्यालय पर प्रदर्शन करने की कोशिश की लेकिन पुलिस ने लाठीचार्ज करके उन्हें रोक दिया। अगले दिन सुबह सैकड़ों मज़दूर फिर ज़िलाधिकारी कार्यालय की ओर रवाना हुए, लेकिन पुलिस ने किसी भी तरह उन्हें वहाँ पहुँचने नहीं दिया। इसके विरोध में मज़दूरों ने 9 मई से 'मज़दूर सत्याग्रह' छेड़ने का ऐलान कर दिया क्योंकि 8 मई को ज़िले में विधानसभा उपचुनाव होने के कारण निषेधाज्ञा लागू थी।

9 मई को गोरखपुर में मज़दूरों के दमन-उत्पीड़न के इतिहास में आज एक नया अध्याय जुड़ गया। 'मज़दूर सत्यागह' को कुचलने के लिए उत्तर प्रदेश पुलिस की कार्रवाई ने ब्रिटिश हुकूमत की याद ताज़ा कर दी।

चार दिन पहले से घोषित शान्तिपूर्ण मज़दूर सत्याग्रह के लिए सुबह मज़दूर कमिश्नर कार्यालय जाने के लिए बरगदवाँ औद्योगिक क्षेत्र के निकट एफ़सीआई मैदान में जैसे ही इकट्ठा हुए भारी संख्या में तैनात पुलिस व अर्द्धसैनिक बलों ने उन पर लाठीचार्ज कर दिया और पानी की तेज़ बौछारों से उन्हें तितर-बितर कर दिया। एक मज़दूर नेता को हिरासत में ले लिया गया। इसके बावजूद मज़दूर शान्तिपूर्ण तरीक़े से कलक्ट्रेट पहुँचने की कोशिश करते रहे लेकिन पूरे दिन शहर के रास्तों पर पुलिस के जत्थे मज़दूरों को खदेड़ते और पीटते रहे। यहाँ तक कि सार्वजनिक वाहनों से जा रहे मज़दूरों तक को उतारकर पीटा और धमकाया गया।

इन सबके बावजूद दोपहर से पहले तक 200 से अधिक मज़दूर ज़िला कलक्ट्रेट पर पहुँच गये जो छावनी बना हुआ था। पुलिस और पीएसी द्वारा लाठीचार्ज करके मज़दूरों को तितर-बितर करने के बाद 30 स्त्री मज़दूरों सहित क़रीब 100 मज़दूरों को गिरफ़्तार कर लिया गया जिन्हें देर रात छोड़ा गया। 3 मई को हुई फ़ायरिंग में गम्भीर रूप से घायल मज़दूर पप्पू जैसवाल की पत्नी संगीता भी सत्याग्रह के लिए पहुँची थी जो पुलिसिया कार्रवाई के दौरान बेहोश हो गयी। प्रशासन की ओर से कोई मदद न मिलने पर मज़दूरों ने किसी तरह उसे अस्पताल पहुँचाया।

पूरे शहर में कहीं भी दस-बारह मज़दूर दिखते ही उन्हें रोक लिया जाता था। फिर भी किसी तरह टाउन हॉल स्थित गाँधी प्रतिमा पर इकट्ठा होकर 200 मज़दूरों ने 'मज़दूर सत्याग्रह' के तहत भूख हड़ताल शुरू कर दी। मज़दूरों के नये-नये जत्थे वहाँ पहुँचने की कोशिश करते रहे और शहरभर में छापामार झड़पों जैसी स्थिति बनी रही।

भारी दमन के बावजूद मज़दूरों के जुझारू संघर्ष और एक सप्ताह से जारी दमन-उत्पीड़न की देशव्यापी निन्दा तथा व्यापक जनदबाव ने प्रशासन और मालिकान को क़दम पीछे खींचने पर मजबूर कर दिया और मज़दूर आन्दोलन को आंशिक जीत हासिल हुई।

10 मई को उपश्रमायुक्त की मौजूदगी में अंकुर उद्योग के मालिकों तथा मज़दूरों के प्रतिनिधियों के बीच हुई वार्ता के बाद अंकुर उद्योग से निकाले गए सभी 18 मज़दूरों को काम पर वापस लेने तथा कारख़ाना कल से शुरू करने पर मालिक पक्ष सहमत हो गया। हालाँकि वी.एन. डायर्स के दो कारख़ानों से निकाले गए 18 मज़दूरों को बहाल करने के सवाल पर गतिरोध बना रहा।

उसी दिन संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा ने ऐलान किया कि गोलीकाण्ड के मुख्य अभियुक्तों की गिरफ़्तारी तथा अभियुक्तों को बचाने वाले अधिकारियों के विरुद्ध कार्रवाई, घायल मज़दूरों को सरकार से मुआवज़ा दिलाने, मज़दूरों पर थोपे गए सभी फर्ज़ी मुक़दमे हटाने, तथा गोलीकाण्ड और 9 मई को 'मज़दूर सत्याग्रह' पर हुए बर्बर दमन की न्यायिक जाँच की माँग को लेकर आन्दोलन जारी रहेगा।

मज़दूर सत्याग्रह का दूसरा चरण

वी.एन. डायर्स लिमिटेड की तालाबन्दी ख़त्म करने और अन्य माँगों पर मालिकों तथा प्रशासन के अड़ियल रुख़ के कारण 16 मई से मज़दूरों ने वी.एन. डायर्स के दोनों कारख़ानों के गेट के सामने आमरण अनशन शुरू करने के साथ मज़दूर सत्याग्रह का दूसरा चरण शुरू कर दिया। इन दो कारख़ानों, एक कपड़ा मिल और एक धागा मिल, में पिछले 10 अप्रैल से अवैध तालाबन्दी थी और इसके 18 मज़दूरों को काम से निकाल दिया गया था।

बन्द कारख़ानों के तीन मज़दूर, एक मज़दूर की माँ और एक स्त्री कार्यकर्ता ने भूख हड़ताल शुरू की। उनके साथ इलाक़े के कई कारख़ानों के सैकड़ों मज़दूर भी धरने पर बैठे। मज़दूरों ने अलग-अलग पालियाँ बाँध लीं, जिससे कि धरनास्थल पर दिनो-रात बड़ी संख्या में मज़दूर बने रहें। प्रशासन और पुलिस ने धरना और भूख हड़ताल को रोकने की हरचन्द कोशिशें कीं लेकिन मज़दूरों के दृढ़ता से अपनी जगह जमे रहने पर आख़िर उन्हें पीछे हटना पड़ा। मज़दूरों के विरोध और उनके आन्दोलन को देशव्यापी समर्थन के दबाव में प्रशासन को झुकना पड़ा और आख़िरकार प्रशासन ने मालिकान के साथ वार्ता शुरू करायी। मालिकों और मज़दूरों के प्रतिनिधियों के बीच दो दौर की वार्ता हुई लेकिन मालिकान निकाले गये 18 मज़दूरों को वापस नहीं लेने पर अड़ियल

(पेज 10 पर जारी)

मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन के नये दौर की शुरुआत

(पेज 1 से आगे)

क़ानून बने हुए हैं लेकिन एक भी लागू नहीं होता। मज़दूरों की ताक़त भी आज बुरी तरह बिखरी और बँटी हुई है। उत्पादन के तौर-तरीक़ों में आये बदलावों ने मज़दूरों को और भी बिखरा दिया है। सरकारें पूँजीपतियों की खुली तरफ़दारी कर रही हैं। श्रम क़ानूनों का कोई मतलब नहीं रह गया है। पूँजी की लूट के साथ ही नेताशाही-नौकरशाही का भ्रष्टाचार कहर बरपा कर रहा है। पूँजीवादी जनतन्त्र नंगा हो चुका है। यह धनतन्त्र और लाठीतन्त्र है – इस बात को सभी देख रहे हैं। चुनावी पार्टियों की यूनियनों के नेता बिक चुके हैं और दलाली की कमाई पर चाँदी काट रहे हैं।

ऐसे में मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन ने आह्वान किया कि मेहनतकश जनता के सामने राह सिर्फ़ एक है। इस राजनीतिक-सामाजिक ढाँचे को ढहाकर एक नया विकल्प खड़ा करना होगा जिसमें उत्पादन, राजकाज और समाज के ढाँचे पर उत्पादन करने वाले लोग क़ाबिज़ होंगे, फ़ैसले की ताक़त उनके हाथों में होगी। लेकिन यह राह ख़ुद चलकर हम तक नहीं आयेगी। हमें इस राह पर चलना होगा। गुज़रे दिनों की पस्ती-मायूसी को भूलकर एक नयी लड़ाई की तैयारी करनी होगी। पिछली हारों से सबक़ लेकर जीत का भविष्य रचना होगा। हमें भितरघातियों और नक़ली मज़दूर नेताओं से होशियार रहना होगा और रस्मी लड़ाइयों से दूर रहना होगा। मेहनतकश की मुक्ति ख़ुद मेहनतकश का काम है। भारत में गाँव और शहर के मज़दूरों की आबादी 50 करोड़ से अधिक है। अर्द्धसर्वहाराओं को मिलाकर कुल मेहनतकश आबादी 80 करोड़ के आसपास है। ये सभी अगर एक साथ आवाज़ उठा दें तो ऐसा बवण्डर उठेगा जिसमें अपने सिंहासन सहित सारे हुक्मरान उड़ जायेंगे। लेकिन न तो यह काम आसान है, न रास्ता छोटा है। एक कठिन, लम्बे रास्ते पर हमें आगे बढ़ना है। शुरुआत हमें यहाँ से करनी होगी कि जो मज़दूर इन बातों को समझते हैं, वे अपने दूसरे साथियों को पूँजीवाद की और इस लोकतन्त्र की अन्दरूनी सच्चाई बतायें, उनमें बदलाव के प्रति भरोसा पैदा करें, उन्हें आपसी एकता की ताक़त से परिचित करायें और भविष्य का रास्ता बतायें।

पिछले वर्ष के उत्तरार्द्ध में माँगपत्रक आन्दोलन के तहत शुरुआत इस लक्ष्य से की गयी कि जो श्रम क़ानून काग़ज़ों पर मौजूद हैं, उन्हें वास्तव में लागू करने के लिए सरकार पर मज़दूर शक्ति का दबाव बनायें, पूँजीवादी लोकतन्त्र जो वायदे करता है, जिन मज़दूर हितों-अधिकारों की पूँजीवादी दलों के नेता भी दुहाई देते रहते हैं उन्हें पूरा करने वाले नये श्रम क़ानून बनाने के लिए और उनके अमल की गारण्टी के लिए दबाव बनायें। इससे व्यापक मेहनतकश आबादी की

रैली स्थल पर पहुँचती मज़दूरों की टोलियाँ

जागृति और एकजुटता की शुरुआत होगी और उसकी नज़रों के सामने पूँजीवादी लोकतन्त्र की असलियत भी बेनक़ाब होगी। 'माँगपत्रक आन्दोलन–2011' का मक़सद देश के ज़्यादा से ज़्यादा मज़दूरों को यह बताना है कि आज किन माँगों पर मज़दूर आन्दोलन नये सिरे से संगठित होगा और कहाँ से शुरुआत करके यह क़दम-ब-क़दम अपनी मंज़िल की ओर आगे बढ़ेगा! इस नयी पहल के तहत मज़दूर अलग-अलग झण्डे-बैनर से नहीं बल्कि 'मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन' के एक ही साझा बैनर के तले अपनी माँगें उठा रहे हैं।

इस आन्दोलन की माँगों को गढ़ने में देश के अलग-अलग हिस्सों के कुछ स्वतन्त्र मज़दूर संगठनों, यूनियनों और मज़दूर अख़बार ने पहल की है, कुछ इलाक़ों में हुई मज़दूरों की छोटी-छोटी पंचायतों की भी इसमें भूमिका है, लेकिन यह आन्दोलन किसी यूनियन, संगठन या राजनीतिक पार्टी के बैनर तले नहीं है। इसका लक्ष्य है कि 'मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन' उन सबका आन्दोलन बने जिनकी माँगें इसमें उठायी गयी हैं, यानी देश के समस्त मज़दूर वर्ग का साझा आन्दोलन बने।

पिछले कुछ महीनों के दौरान मज़दूरों की टोलियों ने माँगपत्रक आन्दोलन के बारे में विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों और मज़दूरों की बस्तियों, लाजों-बेड़ों आदि में सघन प्रचार अभियान चलाया और हज़ारों मज़दूरों के हस्ताक्षर माँगपत्रक पर जुटाये। कई इलाक़ों में मज़दूरों की गोलबन्दी कमेटियों का भी गठन किया गया जिन्होंने हस्ताक्षर जुटाने से लेकर 1 मई की रैली की तैयारियों का ज़िम्मा सँभाला। कुछ इलाक़ों में 'मज़दूर पंचायतें' आयोजित करके भी माँगपत्रक पर खुली चर्चा की गयी। इस आन्दोलन के सारे ख़र्चे जुटाने का काम भी मज़दूरों के बीच से ही किया गया।

●

जन्तर-मन्तर पर मज़दूरों के जुटने का सिलसिला तो 10 बजे से ही शुरू हो गया था लेकिन सभा की शुरुआत दिन में 12.30 बजे से हुई जो शाम 5.30 बजे तक चलती रही।

सभा का संचालन करते हुए **बिगुल मज़दूर दस्ता**, दिल्ली के **सत्यम** ने मई दिवस के ऐतिहासिक महत्त्व की चर्चा करते हुए बताया कि आज यहाँ दूर-दूर से आये मज़दूर अपने महान शहीदों को याद करेंगे और मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन को एक तूफ़ानी जनान्दोलन बनाने का संकल्प लेंगे। उन्होंने कहा कि जिन इलाक़ों में भी मज़दूर इस आन्दोलन से जुड़ रहे हैं वहाँ के मालिकान अभी से बौखलाये हुए हैं और मज़दूरों को दिल्ली जाने से रोकने के लिए तरह-तरह की तिकड़में करने में जुटे हुए थे। अधिकांश जगहों के मज़दूरों को महज़ इस रैली में आने के लिए ही काफ़ी संघर्ष करना पड़ा है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारी लड़ाई कितनी कठिन होगी। लेकिन आज की रैली में उमड़ी मज़दूरों की भीड़ और उनका ज़बरदस्त जोशो-ख़रोश यह विश्वास पैदा कर रहे हैं कि हर बाधा को पार करके यह कारवाँ आगे बढ़ता जायेगा।

बिगुल मज़दूर दस्ता के कार्यकर्ता और **'मुक्तिकामी छात्रों-युवाओं का आह्वान'** पत्रिका के सम्पादक **अभिनव** ने माँगपत्रक आन्दोलन का विस्तार से परिचय देते हुए कहा कि इसमें भारत की सरकार से यह माँग की गयी है कि उसने मज़दूर वर्ग से जो-जो वायदे किये हैं उन्हें पूरा करे, श्रम क़ानूनों को लागू करे, नये श्रम क़ानून बनाये और पुराने पड़ चुके श्रम क़ानूनों को रद्द करे। इस माँगपत्रक में 26 माँगें हैं जिनके दायरे में आज के भारत के मज़दूर वर्ग की लगभग सभी प्रमुख ज़रूरतें आ जाती हैं। इस माँगपत्रक में उसकी राजनीतिक माँगों को भी उठाया गया है। उन्होंने बताया कि माँगपत्रक में सबसे प्रमुखता के साथ न्यूनतम मज़दूरी और काम के घण्टों के सवाल को उठाया गया है। इसमें माँग की गयी है कि ख़ुद सरकार द्वारा तय मानकों के आधार पर एक नयी राष्ट्रीय न्यूनतम मज़दूरी तय की जाये और उसे समय-समय पर बढ़ाया जाये। जब तक कि यह नयी न्यूनतम मज़दूरी तय नहीं होती तब तक न्यूनतम मज़दूरी 11 हज़ार रुपये तय की जाये जो मज़दूर की बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए लगभग पर्याप्त होगी। भोजनावकाश समेत आठ घण्टे काम के दिन को सख़्ती के साथ लागू करने की भी माँग की गयी है। अभिनव ने कहा कि श्रम क़ानूनों का उल्लंघन करने वाले मालिकान और श्रम विभाग के अधिकारियों पर तुरन्त और सख़्त कार्रवाई की जानी चाहिए। इसके लिए माँगपत्रक ने सरकारी श्रम विभाग के पूरे ढाँचे में परिवर्तन की माँग रखते हुए उसके जनवादीकरण की माँग को उठाया है।

टेक्स्टाइल मज़दूर यूनियन, लुधियाना के **राजविन्दर** ने पंजाब में उद्योगपतियों द्वारा मज़दूरों के शोषण की चर्चा करते हुए बताया कि पंजाब का पूरा औद्योगिक विकास प्रवासी मज़दूरों के सहारे खड़ा हुआ है। लेकिन वहाँ प्रवासी मज़दूरों को आर्थिक शोषण के साथ-साथ कई प्रकार से दमन-उत्पीड़न और अपमान का भी सामना करना पड़ता है। यही स्थिति देश के लगभग सभी हिस्सों में काम करने वाले करोड़ों प्रवासी मज़दूरों की है। उन्होंने कहा कि मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन में अन्य माँगों के साथ-साथ प्रवासी मज़दूरों के सवाल को भी प्रमुखता के साथ उठाया गया है।

कारख़ाना मज़दूर यूनियन, लुधियाना के **लखविन्दर** ने कहा कि सरकार ने 1971 का ठेका मज़दूर क़ानून बनाते समय यह वायदा किया था कि ठेका मज़दूरी का उन्मूलन किया जायेगा, लेकिन इसका ठीक उल्टा हुआ है। सरकार ने अपने ही विभागों में ठेकाकरण किया है और निजी पूँजीपतियों को ठेका मज़दूरों का जमकर शोषण करने की छूट दे दी है। इसलिए माँगपत्रक आन्दोलन ने यह माँग की है कि सरकार ठेका मज़दूरी क़ानून के सभी प्रावधानों को सख़्ती से लागू करे और उसमें काम के घण्टे नौ से घटाकर आठ करे। हर प्रकार के अस्थायी मज़दूरों और ठेका मज़दूरों को स्थायी किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि लुधियाना में बड़े पैमाने पर पीस रेट पर काम कराया जाता है जिसके मज़दूरों को कोई भी सुविधा हासिल नहीं होती। माँगपत्रक में यह माँग रखी गयी है कि अलग-अलग पेशों में पीस रेट को दिनभर में काम के घण्टे और उस पेशे की औसत उत्पादकता के अनुसार इस तरह से तय किया जाये जिससे वह न्यूनतम मज़दूरी के बराबर हो जाये।

छत्तीसगढ़ माइन्स श्रमिक संघ के **अध्यक्ष का. गणेशराम चौधरी** ने कहा कि मज़दूरों को अपनी लड़ाई में ग़रीब किसानों को भी साथ लेना चाहिए। उन्होंने छत्तीसगढ़ में शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में खड़े हुए जुझारू और व्यापक आधार वाले मज़दूर आन्दोलन की चर्चा करते हुए कहा कि आज के दौर में मज़दूरों पर हो रहे नये हमलों से लड़ने के लिए माँगपत्रक आन्दोलन के तहत की

(पेज 9 पर जारी)

1 मई 2011, दिल्ली के जन्तर-मन्तर की कुछ तस्वीरें

अब चलो नई शुरुआत करो
मज़दूर मुक्ति की बात करो!

मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन के नये दौर की शुरुआत

(पेज 7 से आगे)

गयी शुरुआत बहुत महत्त्वपूर्ण है।

संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा, गोरखपुर के संयोजक **तपीश** मैन्दोला ने आते ही मज़दूरों से काफ़ी देर तक ज़ोरदार नारे लगवाकर पूरे माहौल में नया जोश भर दिया। उन्होंने कहा कि मज़दूरों को कारख़ानों में अपने आर्थिक हितों के लिए लड़ने के साथ ही पूँजीवादी लूट से मुक्त नयी व्यवस्था के निर्माण की लम्बी लड़ाई के लिए भी तैयारी करनी होगी। अगर हम केवल आज के बारे में सोचेंगे तो आज हम जो कुछ लड़कर हासिल करेंगे उसे भी कल बचाकर नहीं रख पायेंगे।

गोरखपुर से ही आये **टेक्सटाइल वर्कर्स यूनियन, गोरखपुर** के **प्रमोद कुमार** ने कहा कि अलग-अलग कारख़ानों के मज़दूर जब अपने-अपने मालिक से लड़ते हैं तो उनकी ताक़त बँट जाती है जबकि मालिकान और प्रशासन की पूरी शक्ति उनके ख़िलाफ़ खड़ी हो जाती है। आज हर जगह के मज़दूरों की हालत कमोबेश एक जैसी है। उनकी माँगें भी एक जैसी हैं। ऐसे में यह ज़रूरी है कि मज़दूरों की आम माँगों को लेकर व्यापक एकता बनायी जाये और उन्हें लागू कराने के लिए सरकार पर दबाव बनाया जाये। माँगपत्रक आन्दोलन का यही लक्ष्य है।

स्त्री मज़दूर संगठन, दिल्ली की **कविता** ने कहा कि इस देश के मेहनतकशों को तीन बड़े ऐतिहासिक विश्वासघातों का सामना करना पड़ा है। पहला विश्वासघात था 15 अगस्त 1947 की आज़ादी जो सिर्फ़ मुट्ठी भर ऊपरी जमातों की आज़ादी साबित हुई। मज़दूरों को इस आज़ादी से कुछ भी हासिल नहीं हुआ। उनके साथ दूसरा ऐतिहासिक विश्वासघात संविधान के नाम पर किया गया। कहा गया कि यह जनता का संविधान है लेकिन वास्तव में इस संविधान को सिर्फ़ 15 फ़ीसदी लोगों के प्रतिनिधियों ने बनाया था और इसमें उन्हीं के हित सुरक्षित रखने का इन्तज़ाम किया गया है। इसी संविधान के तहत पिछले 60 साल से ग़रीबों के अधिकार छीने जा रहे हैं और उन्हें लूटा जा रहा है। कविता ने कहा कि मज़दूरों के साथ तीसरा बड़ा विश्वासघात किया है उन लोगों ने जो मज़दूरों के रहनुमा होने का दावा करते थे, यानी लाल झण्डे की चुनावी राजनीति करने वाली नक़ली कम्युनिस्ट पार्टियों और उनसे जुड़ी ट्रेड यूनियनों के नेताओं ने। उन्होंने मज़दूरों से इन नक़ली लाल झण्डे वालों को किनारे लगाकर अपनी क्रान्तिकारी यूनियनें बनाने का आह्वान किया। कविता ने माँगपत्रक में स्त्री मज़दूरों की विशेष माँगों की चर्चा करते हुए कहा कि आज करोड़ों की संख्या में स्त्रियाँ मज़दूरी करने घर से बाहर निकल रही हैं। पुरुष मज़दूरों को उनसे होड़ नहीं महसूस करनी चाहिए बल्कि उन्हें अपनी लड़ाई में बराबरी का भागीदार बनाना चाहिए।

करावलनगर मज़दूर यूनियन, दिल्ली के **आशीष** ने कहा है कि आज देश की 93 प्रतिशत से भी अधिक मज़दूर आबादी असंगठित है जिसे कोई भी बुनियादी सुविधा नहीं मिली है और अपनी आवाज़ उठाने के लिए यूनियन के अधिकार से भी वे वंचित हैं। उन्होंने कहा कि अलग-अलग कारख़ानों में अकेले-अकेले लड़कर मज़दूर नहीं जीत सकते। उन्हें इलाक़ाई और पेशागत आधार पर एकजुट होना होगा। दिल्ली में 2009 में क़रीब 25,000 बादाम मज़दूरों के सफल आन्दोलन का ज़िक्र करते हुए कहा कि इस आन्दोलन में असंगठित मज़दूरों की इलाक़ाई और पेशागत पैमाने की एकता ही उनकी सबसे बड़ी ताक़त साबित हुई थी।

बिगुल मज़दूर दस्ता, उत्तर-पश्चिम दिल्ली के **रूपेश कुमार** ने दिल्ली के कारख़ानों में मज़दूरों के बर्बर शोषण का बयान करते हुए बताया कि देश की सरकार की नाक के नीचे सभी श्रम क़ानूनों का खुला उल्लंघन होता है। उन्होंने कहा कि खुद दिल्ली सरकार के श्रम मन्त्री के ही कारख़ाने में न तो न्यूनतम मज़दूरी लागू होती है और न ही मज़दूरों को अन्य कोई सुविधा मिलती है। दिल्ली और इसके आसपास नोएडा, गाज़ियाबाद, फ़रीदाबाद, गुड़गाँव, बहादुरगढ़ आदि में डेढ़-दो करोड़ मज़दूर नारकीय स्थितियों में रहते और काम करते हैं। इन सभी मज़दूरों के हालात एक जैसे हैं। हमें अगले तीन वर्ष में इनमें से एक-एक मज़दूर के पास अपनी बात पहुँचाने के लिए अभी से लग जाना होगा।

दिल्ली मेट्रो कामगार यूनियन के **अजय स्वामी** ने कहा कि संसद में बैठे लोग इस देश की जनता के प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं। मगर देश की 80 प्रतिशत मेहनतकश आबादी की माँगों पर कान देने की भी उन्हें फ़ुरसत नहीं है। होगी भी कैसे? संसद में 300 से तो ज़्यादा करोड़पति बैठते हैं। बाक़ी भी करोड़पति ही होंगे, बस उन्होंने अपनी सम्पत्ति की पूरी घोषणा नहीं की है। यह माँगपत्रक देश की सरकार से माँग करता है कि वह अपने सभी वायदों को पूरा करे, जो उसने देश के मेहनतकशों से किये हैं। अगर वे ऐसा नहीं कर सकते तो उन्हें जनप्रतिनिधि कहलाने का और सरकार चलाने का कोई नैतिक अधिकार नहीं है। उन्होंने श्रम विभाग के पूरे ढाँचे का विस्तार करने और एक लेबर या ब्यायलर इंस्पेक्टर की जगह इंस्पेक्टोरेट बनाने की माँग की जिसमें मालिकों, सरकार और मज़दूरों के प्रतिनिधि शामिल हों। इसी तरह सभी तरह की जाँच समितियों में भी इन तीनों के प्रतिनिधियों के साथ जनवादी अधिकार कार्यकर्ताओं और श्रम क़ानूनों के जानकारों को शामिल किया जाना चाहिए।

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के उपाध्यक्ष **शेख अंसार** ने कहा कि मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन ने उन्हें आज के दौर में मज़दूर आन्दोलन के सामने मौजूद समस्याओं और चुनौतियों का सामना करने के लिए सही नज़रिया दिया है। उन्होंने छत्तीसगढ़ में शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में हुए नये प्रयोगों के बारे में बताते हुए कहा कि आज हमें नयी समस्याओं से लड़ने के लिए नये औज़ार गढ़ने होंगे। साथ ही, अपने आन्दोलन की कमियों के बारे में भी ईमानदारी से मन्थन करना होगा और उन्हें दूर करके आगे बढ़ना होगा।

छत्तीसगढ़ से आये क्रान्तिकारी गायक **फागूराम यादव** ने कई जोशीले गीत सुनाकर दूर-दूर तक फैले मज़दूरों के हुजूम को नये जोशो-ख़रोश से भर दिया। वे छत्तीसगढ़ी भाषा में बोले लेकिन उनके उद्वेलित करने वाले भावों को समझने में किसी को भी कठिनाई नहीं हुई। उन्होंने मज़दूरों का आह्वान किया कि अपनी ज़िन्दगी बदलने के लिए और एक नया हिन्दुस्तान बनाने के लिए उठ खड़े हों।

बिगुल मज़दूर दस्ता से जुड़े प्रिंटिंग मज़दूर **पुष्पराज** ने कारख़ानों में मज़दूरों के शोषण और उत्पीड़न का बयान करते हुए कहा कि हम एकजुट होकर ही इस अन्याय से लड़ सकते हैं। **बादाम मज़दूर यूनियन,** करावलनगर के **कपिल** ने कहा कि आज मज़दूरों की समस्याओं पर कहीं कोई ध्यान नहीं दे रहा है। देश में बेरोज़गारी बढ़ रही है, महँगाई से जनता का जीना मुहाल हो गया है लेकिन सरकार सिर्फ़ धनपतियों की सेवा में लगी है।

गोरखपुर से आये **संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा** के **भरत** ने कहा कि मज़दूरों की बढ़ती एकजुटता से गोरखपुर के कारख़ाना मालिक बौखलाये हुए हैं और हमें तरह-तरह से बरगलाकर, डरा-धमकाकर हमारी एकता को तोड़ने में लगे हैं। गोरखपुर के सांसद योगी आदित्यनाथ उनके सरपरस्त बने हुए हैं। लेकिन इन लोगों की कोई चाल कामयाब नहीं होगी। गोरखपुर के सहजनवाँ स्थित गीडा औद्योगिक क्षेत्र के मज़दूर **दीपक पाण्डेय** ने कहा कि मज़दूरों को दूसरों के भरोसे रहने के बजाय खुद अपने भीतर से नेतृत्व पैदा करना होगा।

अगले तीन वर्ष में देश के करोड़ों मज़दूरों से माँगपत्रक पर हस्ताक्षर जुटाने और मज़दूरों के सैलाब के साथ दिल्ली को घेरने का संकल्प लेकर रैली का समापन हुआ। दिल्ली और पंजाब के साथियों के गाये गीत 'बोल मजूरे हल्ला बोल... काँप उठी सरमायेदारी खुलके रहेगी इसकी पोल' और गगनभेदी नारों के साथ सभा समाप्त हुई।

सभा समाप्त होने के काफ़ी देर बाद तक भी भारी संख्या में मज़दूर जन्तर-मन्तर पर ही जमे रहे। दिल्ली और आसपास के मज़दूरों के जाने के बाद बाहर से आये जिन मज़दूरों को दूर-दूर की गाड़ियाँ पकड़नी थीं उन्होंने जन्तर-मन्तर की सड़क पर ही बैठकर खाना खाया जो आन्दोलन के शुभचिन्तकों तथा दिल्ली के विभिन्न इलाक़ों के मज़दूर परिवारों की ओर से लाया गया था। रात तक जन्तर-मन्तर पर जगह-जगह बैठे मज़दूरों के दल आपस में बातें करते और अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करते रहे।

आये दिन दिल्ली में होने वाली रैलियों के विपरीत इस रैली में हज़ारों की भीड़ के बावजूद लगातार एक दृढ़संकल्प और अनुशासन दिखायी देता रहा। भीषण गर्मी के बावजूद पूरी रैली के दौरान शायद ही कोई मज़दूर रैली स्थल से दूर गया हो। औरतों, बच्चों और बुज़ुर्ग मज़दूरों समेत सारे लोग लगातार मंच स्थल के चारों ओर जमे रहे और नारों तथा गीतों में उत्साह के साथ भागीदारी करते रहे।

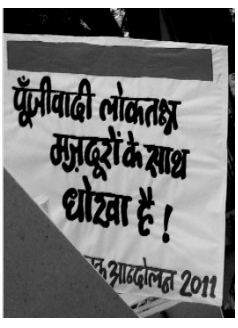

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन

(पेज 6 से आगे)

रवैया अपनाये रहे। उन्होंने इस माँग को छोड़ने पर राजी करने के लिए अन्य मज़दूरों के सामने कई तरह के प्रलोभन भी रखे लेकिन मज़दूर इस बात पर दृढ़ थे कि जब तक सभी 18 मज़दूर बहाल नहीं होंगे तब तक एक भी मज़दूर काम पर नहीं जायेगा।

प्रशासन द्वारा कोई सुनवाई न होते देख भूख हड़ताल के पाँचवें दिन लगभग 500 मज़दूर भूख हड़तालियों को ठेलों पर लिटाकर ज़िलाधिकारी कार्यालय की ओर जा रहे थे तो डीआईजी रेंज की अगुवाई में आये भारी पुलिस बल ने उन्हें रास्ते में ही रोक दिया। इस पर सभी मज़दूरों ने आपस में एक-दूसरे को लम्बी रस्सियों से बाँध लिया ताकि पुलिस के लिए उन्हें हटाना या गिरफ़्तार करना मुश्किल हो जाये। आख़िरकार पुलिस ने लाठीचार्ज करने के बाद अनशनकारियों सहित 73 मज़दूरों को हिरासत में ले लिया। तपीश मैन्दोला को पुलिस ने किसी अन्य स्थान से उठा लिया लेकिन अगले दिन तक उनकी गिरफ़्तारी दिखायी ही नहीं गयी। इसके बाद भी किसी तरह लगभग 250 मज़दूर टाउनहाल पहुँचकर फिर धरने पर बैठ गये। उधर डीएम कार्यालय पहुँचे क़रीब 50 मज़दूरों पर पुलिस ने बुरी तरह लाठीचार्ज किया जिससे 25 मज़दूरों को चोटें आयीं।

तपीश मैन्दोला और 13 मज़दूरों को फ़र्ज़ी आरोपों में जेल भेज दिया गया जहाँ से एक सप्ताह बाद उनकी जमानत हो सकी। लेकिन मज़दूर अपनी माँगों पर अडिग रहे। 30 मई को, मज़दूरों ने धागा मिल में घुसकर उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। इससे प्रबन्धन के लिए मज़दूरों को काम पर वापस लिए बिना मिलें चालू करना असम्भव हो गया जैसा करने की वह बार-बार कोशिश कर रहा था। बड़ी संख्या में मज़दूर कारख़ाने के बाहर निगरानी कर रहे थे। 1 जून की रात प्रशासन मालिकों और मज़दूरों को वार्ता के लिए बुलाने को बाध्य हो गया और 3 घण्टे तक चली बातचीत के बाद मज़दूरों को फिर एक जीत मिली और वी.एन. डायर्स के मालिक अजितसरिया ने तालाबन्द मिलों को चालू करने और निष्कासित मज़दूरों को वापस लेने पर समझौता किया। इसके तहत 18 निष्कासित मज़दूरों में से 12 को तुरन्त काम पर रख लिया गया और बाक़ी 6 मज़दूरों को एक आन्तरिक जाँच-पड़ताल के बाद वापस लिया जायेगा। मज़दूरों ने मालिकों पर दबाव बनाकर यह तय कराया कि जाँच समिति में प्रबन्धन की तरफ़ से कोई नहीं होगा। इसमें स्टाफ के दो सदस्य तथा एक मज़दूर द्वारा चुना गया प्रतिनिधि होगा।

इसके बावजूद, संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा ने चेतावनी दी कि यदि घायलों को मुआवज़ा देने, मज़दूरों पर दायर फ़र्ज़ी मुक़दमे वापस लेने, गोलीकाण्ड की न्यायिक जाँच कराने तथा मुख्य आरोपियों को गिरफ़्तार करने की उनकी माँगों को प्रशासन गम्भीरतापूर्वक नहीं लेता है तो मज़दूर सत्याग्रह का तीसरा चरण शुरू किया जायेगा। मोर्चा ने मज़दूरों को इस जीत के बावजूद सावधान रहने के लिए कहा क्योंकि प्रशासन एवं प्रबन्धन पहले भी कई बार अपने वायदों से मुकर चुके हैं।

मज़दूर आन्दोलन को देशव्यापी समर्थन

मज़दूर आन्दोलन पर दमन की ख़बरों के फैलते ही देशभर में इसकी व्यापक निन्दा की गयी और आन्दोलन को व्यापक समर्थन मिला। देशभर से सैकड़ों लोगों ने फ़ोन, फ़ैक्स तथा ईमेल से ज़िला प्रशासन और राज्य सरकार को अपना विरोध दर्ज कराया और विभिन्न संगठनों ने बयान जारी कर दमन की निन्दा की।

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन समर्थक नागरिक मोर्चा की पहल पर उत्तर प्रदेश की मुख्यमन्त्री मायावती के नाम याचिका पर दिल्ली, लखनऊ, इलाहाबाद, लुधियाना, मुम्बई आदि शहरों में हस्ताक्षर अभियान के साथ ही ऑनलाइन भी देश-विदेश से हस्ताक्षर कराये गये। इस पर हस्ताक्षर करने वालों में न्यायमूर्ति राजिन्दर सच्चर, डा. विनायक सेन, मेधा पाटकर, पीयूसीएल के राष्ट्रीय महासचिव पुष्कर राज, प्रख्यात फिल्मकार आनन्द पटवर्धन, प्रसिद्ध मानवाधिकार कर्मी गौतम नवलखा, इण्डियन एसोसिएशन ऑफ़ पीपुल्स लॉयर्स के के.डी. राव, उत्तर प्रदेश पीयूसीएल के उपाध्यक्ष रविकिरण जैन, प्रसिद्ध कवि एवं 'पब्लिक एजेण्डा' के कार्यकारी सम्पादक मंगलेश डबराल, 'समयान्तर' पत्रिका के सम्पादक पंकज बिष्ट, कवि पंकज सिंह, आल इण्डिया सेक्युलर फ़ोरम के राम पुनियानी, लखनऊ विश्वविद्यालय की पूर्व कुलपति डा. रूपरेखा वर्मा, ज़िला बार एसोसिएशन लुधियाना के अध्यक्ष अशोक मित्तल, डेमोक्रेटिक लॉयर्स एसोसिएशन पंजाब के कुलदीप सिंह, एमसीपीआई पंजाब के हरविलास सिंह, वरिष्ठ पत्रकार अनिल चमड़िया, अजित साही, पाणिनी आनन्द, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. ईश मिश्र, प्रो. पीके विजयन, हैदराबाद विश्वविद्यालय के प्रो. बी.आर. बापूजी एवं डा. शुभदीप, कोलकाता के इतिहासकार देवव्रत बनर्जी, पंजाबी विश्वविद्यालय के प्रो. गुरभगवान गिल, सीटीयू वर्कर्स यूनियन, पीयूसीएल, उत्तर प्रदेश के अध्यक्ष चितरंजन सिंह एवं महासचिव वन्दना मिश्र, जन संस्कृति मंच की भाषा सिंह, सीपीआई-एमएल न्यू डेमोक्रेसी की दिल्ली सचिव अपर्णा, पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ्रण्ट के एन. बाबैया, पीयूसीएल झारखण्ड के एस. आर. नाग, ह्यूमन राइट्स अलर्ट के बबलू ल्यूटेंगटन आदि प्रमुख थे।

125वें मई दिवस की रैली में भाग लेकर लौटे मज़दूरों पर गोलीबारी की घटना की विदेश में भी कड़ी निन्दा हुई। जर्मनी की डेमोक्रेटिक सोशलिस्ट पार्टी की कार्यकारिणी के सदस्य इलियट आइज़नबर्ग एवं आई. ओ'कैलाघन, रैडिकल विमेन, आस्ट्रेलिया की डेबी ब्रेनन तथा रैडिकल विमेन, अमेरिका की प्रतिनिधि एन्ने स्लेटर, कनाडा की विल्फर्ड लॉरियर युनिवर्सिटी फ़ैकल्टी एसोसिएशन के डा. हर्बर्ट पिमलॉट, इंग्लैण्ड की सामाजिक कार्यकर्ता क्रिस्टीन टिकनर, लेबर स्टार्ट के सम्पादक एरिक ली, मलेशिया की सोशलिस्ट पार्टी के जीविन द्रान, पाकिस्तान मज़दूर महाज़ के तुफ़ैल अब्बास सहित अनेक ट्रेडयूनियन कर्मियों तथा बुद्धिजीवियों ने इसे भारत के लोकतन्त्र के लिए शर्मनाक घटना बताया।

मज़दूर सत्याग्रह के दूसरे चरण के पुलिसिया दमन के विरोध में मुम्बई की वरिष्ठ वकील एवं सामाजिक कार्यकर्ता कामायनी बाली-महाबल की पहल पर शुरू हुए हस्ताक्षर अभियान में शहीदेआज़म भगतसिंह के भांजे प्रो. जगमोहन सिंह, मेजर जनरल (अव.) एस.जी. वोंबेतकर, प्रसिद्ध वकील नीलोफ़र भागवत सहित सैकड़ों लोगों ने हस्ताक्षर किये।

लखनऊ में वयोवृद्ध पूर्व शिक्षक नेता एवं अनुराग ट्रस्ट की अध्यक्ष कमला पाण्डेय ने मुख्यमन्त्री मायावती के नाम भेजे दो पत्रों में कहा कि गोरखपुर के मज़दूरों पर लगातार जारी दमन-उत्पीड़न को यदि बन्द नहीं किया गया तो वे स्वयं गोरखपुर पहुँचकर आमरण अनशन शुरू कर देंगी। उन्होंने कहा कि सत्ता के दम्भ में मायावती शायद यह भूल गई हैं कि वे प्रदेश के लाखों मज़दूरों की भी प्रतिनिधि हैं।

लखनऊ तथा गोरखपुर में विभिन्न संगठनों ने उत्तर प्रदेश में बढ़ते दमन-उत्पीड़न के ख़िलाफ़ साझा मोर्चा बनाकर व्यापक जनान्दोलन छेड़ने की तैयारी भी शुरू कर दी थी।

दिल्ली से गयी मीडियाकर्मियों की एक जाँच टीम ने गोरखपुर में तीन दिन तक रहकर सभी पक्षों से विस्तृत छानबीन करने के बाद अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट कहा कि गोलीबारी की घटना और मज़दूरों के दमन के लिए प्रशासन दोषी है तथा मज़दूरों की माँगें मानी जानी चाहिए। मैगसेसे पुरस्कार से सम्मानित प्रसिद्ध सामाजिककर्मी सन्दीप पाण्डेय के नेतृत्व में जनान्दोलनों के राष्ट्रीय समन्वय (एनएपीएम), पीयूसीएल तथा पीपुल्स यूनियन फ़ोर ह्यूमन राइट्स (पीयूएचआर) की एक संयुक्त जाँच टीम ने भी गोरखपुर का दौरा किया और 3 मई के गोलीकाण्ड तथा लगातार जारी श्रमिक अशान्ति के कारणों की जाँच-पड़ताल की। जाँच दल में श्री संदीप पाण्डेय के अलावा पीयूसीएल के फतेहबहादुर सिंह एवं राजीव यादव और पीयूएचआर के मनोज सिंह शामिल थे। इस जाँच दल ने भी मज़दूरों की माँगों को जायज़ ठहराते हुए दमन तथा गोलीकाण्ड की न्यायिक जाँच कराने की संस्तुति की।

पृष्ठभूमि

यह आन्दोलन इस मायने में महत्त्वपूर्ण है क्योंकि गोरखपुर में पिछले कुछ दशकों से किसी उल्लेखनीय मज़दूर आन्दोलन की चर्चा नहीं सुनी गयी थी। कई दशक पहले इस इलाक़े में स्थित क़रीब दर्जनभर चीनी मिलों के मज़दूरों को बंगाल से आये एक चिकित्सक ने संगठित किया था और उन्होंने लड़कर बहुत से अधिकार भी हासिल किये थे। लेकिन धीरे-धीरे वह आन्दोलन कमजोर पड़ते हुए आज पूरी तरह बिखर चुका है। गोरखपुर में बड़ी संख्या में मौजूद बुनकरों के बीच भी एक समय कम्युनिस्टों ने काम किया था लेकिन आज वह आन्दोलन भी पूरी तरह बिखर चुका है। गोरखपुर के खाद कारख़ाने के मज़दूरों के बीच समाजवादी नेता रमाकान्त पाण्डेय के नेतृत्व में जुझारू आन्दोलन खड़ा हुआ था लेकिन सार्वजनिक क्षेत्र के अनेक कारख़ानों की तरह यह कारख़ाना भी सरकारी उपेक्षा, अफ़सरों की लूट और भ्रष्टाचार के कारण बन्द हो गया। यह अलग बात है कि इसका भी ठीकरा अक्सर मज़दूरों के आन्दोलन के सर फोड़ने की कोशिश की जाती है। पूर्वोत्तर रेलवे का मुख्यालय होने के चलते गोरखपुर में बड़ी संख्या में रेलवे के मज़दूर और कर्मचारी रहते हैं लेकिन विशुद्ध अर्थवादी राजनीति करने वाली उनकी यूनियनें भी लम्बे समय से निष्प्रभावी हो चुकी हैं और रेलवे के किश्तों में निजीकरण, कर्मचारियों की छँटनी, गोरखपुर के लोको व सिग्नल वर्कशाप की दुर्दशा जैसे बड़े मुद्दों पर कुछ करने की हालत में नहीं रह गयी हैं।

लेकिन पिछले दो दशकों में गोरखपुर में नयी औद्योगिक इकाइयाँ तेज़ी से विकसित हुई हैं। इस ज़िले में दो औद्योगिक इलाक़े हैं। शहर की दक्षिणी सीमा पर बरगदवाँ औद्योगिक क्षेत्र है तथा पूर्व में शहर से 15 किमी दूर सहजनवाँ स्थित गोरखपुर औद्योगिक विकास प्राधिकरण (गीडा) का औद्योगिक क्षेत्र है। बरगदवाँ में क़रीब 50 फ़ैक्टरियाँ हैं जिनमें 3 धागा मिलें, एक कपड़ा मिल, सरिया मिल, साइकिल की रिम, बर्तन, प्लास्टिक के बोरे, मुर्गी के चारे, आइसक्रीम, बिस्किट आदि बनाने की इकाइयाँ हैं। इनमें से प्रत्येक फ़ैक्टरी में 80 से लेकर 1000 मज़दूर तक काम करते हैं। गीडा में लगभग 200 छोटी-बड़ी औद्योगिक इकाइयाँ कार्यरत हैं और लगभग 100 इकाइयाँ और शुरू होने वाली हैं। इनमें फ़ार्मास्युटिकल्स और स्नैक्स से लेकर टेक्सटाइल तथा इंजीनियरिंग पार्ट्स बनाने तक की इकाइयाँ शामिल हैं। ये उद्योग भले ही एक पिछड़े इलाक़े में स्थित हैं लेकिन ये राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय बाज़ार के लिए भी उत्पादन करते हैं।

लेकिन इन कारख़ानों में काम करने वाले मज़दूरों की हालात दयनीय है। इनमें लगभग आधे मज़दूर आसपास के इलाक़ों के हैं तथा बाक़ी बिहार से आते हैं। वे बेहद बुरी परिस्थितियों में रहते और काम करते हैं। इन फ़ैक्टरियों में कोई भी श्रम क़ानून लागू नहीं होता। न्यूनतम मज़दूरी, काम के घण्टे, ओवरटाइम, बोनस, पीएफ़, जॉब कार्ड, ईएसआई आदि के प्रावधान केवल काग़ज़ों पर ही मौजूद हैं। अधिकांश कारख़ानों में 12 से 14 घण्टे काम होता है। आयेदिन फ़ैक्टरियों में दुर्घटनाएँ होती रहती हैं। बात-बात पर गालियाँ और मार-पीट तक सहनी पड़ती है। विरोध करने पर निकाल दिया जाता है। अधिकांश कारख़ानों में यूनियन नहीं है जिससे मालिकों को मनमानी करने की खुली छूट मिली हुई है।

संगठित आन्दोलन की शुरुआत

ऐसा नहीं था कि मज़दूर इस ज़ुल्म को चुपचाप सहन कर रहे थे। उन्होंने कई बार इसके ख़िलाफ़ आवाज़ उठायी, लेकिन हर बार उन्हें दबा दिया गया। 2009 में अंकुर उद्योग के मज़दूरों ने बुनियादी सुविधाएँ दिये जाने की माँग करते हुए हड़ताल कर दी। शुरू में उनका आन्दोलन बहुत ही कमजोर और दिशाहीन था क्योंकि किसी भी मज़दूर को अपने क़ानूनी अधिकारों और यूनियन कार्य के तौर-तरीक़ों आदि के बारे में कोई जानकारी या अनुभव नहीं था। इसी दौरान कुछ मज़दूरों ने गोरखपुर में लम्बे समय से सामाजिक काम करने वाले दो संगठनों **बिगुल मज़दूर दस्ता** और **नौजवान भारत सभा** के कार्यकर्ताओं से सम्पर्क साधा और उनसे अपने आन्दोलन को दिशा देने का आग्रह किया।

नौभास और बिगुल के कार्यकर्ताओं के शामिल होने के बाद अंकुर उद्योग के मज़दूर आन्दोलन को स्पष्ट दिशा मिली। शीघ्र ही समीप की एक और धागा बनाने वाली फ़ैक्टरी वी.एन. डायर्स की दोनों मिलों के क़रीब 500 मज़दूर भी संघर्ष में शामिल हो गये। इसके बाद संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा का गठन किया गया। मालिकान ने डराने-धमकाने की तमाम तरक़ीबों द्वारा मज़दूरों की एकता को तोड़ने का प्रयास किया। भाड़े के गुण्डों द्वारा मज़दूर नेताओं को बुरी तरह पीटा गया। लेकिन इन सबके बावजूद मज़दूरों के जुझारू संघर्ष और एकजुटता के सामने आख़िरकार मालिकान को झुकना पड़ा। 29 जुलाई 2009 को उप श्रम आयुक्त एवं मज़दूरों के प्रतिनिधियों के साथ हुई वार्ता में मालिकान मज़दूरों की माँगों को मानने पर मजबूर हुए। यह गोरखपुर के मज़दूरों की पहली जीत थी।

मज़दूरों के ख़िलाफ़ उद्योगपति-नेताशाही-राजनेताओं का गँठजोड़

तीन फ़ैक्टरियों के मज़दूरों की जीत से प्रेरित होकर अगस्त 2009 में

(पेज 11 पर जारी)

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन

(पेज 10 से आगे)

मार्डन लैमिनेटर्स और मार्डन पैकेजिंग नामक फ़ैक्टरियों के क़रीब 1000 मज़दूरों ने भी अपनी माँगों को लेकर संगठित संघर्ष शुरू कर दिया। ख़ास बात यह थी कि इन सभी आन्दोलनों में दूसरे कारख़ानों के मज़दूर भी न सिर्फ़ एकजुटता ज़ाहिर करने आते थे बल्कि धरना, जुलूस, गेटमीटिंग जैसे कार्यक्रमों में भी बढ़चढ़कर हिस्सा लेते थे। स्त्री मज़दूरों और मज़दूर परिवारों की स्त्रियाँ भी आन्दोलन में अगली क़तारों में रहती थीं। मज़दूरों की इस एकता को देखकर उद्योगपति बौखलाये हुए थे। इसी समय मीडिया में बाकायदा एक अभियान चलाया गया कि कुछ 'बाहरी तत्व' पूर्वी उत्तर प्रदेश की औद्योगिक शान्ति को बिगाड़ रहे हैं। गोरखपुर के भाजपा सांसद योगी आदित्यनाथ ने बयान दिया कि यह आन्दोलन 'माओवादी' और 'आतंकवादी' चला रहे हैं। उन्होंने मुद्दे को साम्प्रदायिक रंग देने के लिए यहाँ तक कहा कि यह आन्दोलन चर्च द्वारा प्रायोजित है। आन्दोलन का नेतृत्व करने वालों को "माओवादी" और मज़दूर आन्दोलन को "पूर्वांचल को अस्थिर करने की साज़िश" बताते रहे और ऐसे आरोप लगाते हुए केन्द्र तथा राज्य सरकार को पत्र भी लिखे। गोरखपुर चैम्बर ऑफ़ इण्डस्ट्री तथा ज़िला प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारी भी यही आरोप दोहराने लगे। मार्डन लैमिनेटर्स और मार्डन पैकेजिंग के मालिक पवन बथवाल पहले भाजपा में थे और शहर के मेयर रह चुके थे। इस समय वे शहर कांग्रेस के बड़े नेता और गोरखपुर से सांसद के टिकट के उम्मीदवार भी हैं। उन्होंने अपने राजनीतिक सम्पर्कों के ज़रिये भी प्रशासन पर काफ़ी दबाव डलवाया। लगभग ढाई महीने तक मज़दूर धीरज के साथ आन्दोलन चलाते रहे और आन्दोलन को बदनाम करने के सभी आरोपों का तथ्यपरक जवाब देते रहे लेकिन प्रशासन में उनकी कोई सुनवाई नहीं हुई। इसी बीच योगी आदित्यनाथ को मज़दूरों की ओर से लिखी गयी चिट्ठी की भी काफ़ी चर्चा रही।

अक्टूबर 2009 में लम्बे आन्दोलन के बाद प्रशासन के दबाव में मालिकान ने मज़दूरों की अधिकांश माँगों को मानने का समझौता किया। लेकिन समझौते के बावजूद पवन बथवाल ज़्यादातर माँगों से मुकर गये और कुछ दिन बाद मिलें बन्द कर अन्यत्र स्थानान्तरित कर दीं।

वयोवृद्ध शिक्षक नेता कमला पाण्डेय द्वारा मुख्यमन्त्री को लिखा चेतावनी पत्र

प्रति,
सुश्री मायावती जी,
मुख्यमन्त्री, उत्तर प्रदेश

विषय : गोरखपुर के मज़दूरों के बर्बर दमन की अविलम्ब निष्पक्ष जाँच की माँग तथा ऐसा ना होने की स्थिति में आमरण अनशन की पूर्व सूचना

प्रिय मायावती जी,

मैं कमला पाण्डेय, आयु 81 वर्ष, साठ वर्षों से ग़रीबों-मज़लूमों के लोकतान्त्रिक अधिकारों के लिए लड़ती रही हूँ और उ.प्र. माध्यमिक शिक्षक संघ में सक्रिय रही हूँ। अब जीवन की सान्ध्य बेला में, हृदय रोग और शारीरिक अशक्तता के बावजूद अपनी सामाजिक सक्रियता जारी रखते हुए मैं बच्चों की संस्था 'अनुराग ट्रस्ट' चलाती हूँ।

महोदया, गोरखपुर के मज़दूरों पर पिछले हफ़्तों से पुलिस-प्रशासन और उद्योगपतियों के गुण्डों का जो बर्बर आतंक राज्य जारी है, उसकी ख़बरें मुझे विचलित करती रही हैं। फ़र्ज़ी मुक़दमे, गिरफ़्तारी, लाठीचार्ज आदि की कार्रवाई तो अप्रैल से ही जारी है। 3 मई को 'अंकुर उद्योग' के मालिकों के गुण्डों द्वारा अन्धाधुंध गोलीवर्षा में 19 मज़दूर ज़ख़्मी हुए जिनमें से एक अभी भी जीवन-मृत्यु के बीच झूल रहा है। आपकी पुलिस-प्रशासन ने गिरफ़्तारी का बहाना बनाकर गुण्डों को फ़ैक्टरी परिसर से बाहर निकालने का और मज़दूर नेताओं पर नये फ़र्ज़ी मुक़दमे ठोकने का काम किया। गोरखपुर के कमिश्नर वहाँ के भाजपा सांसद के सुर में सुर मिलाते हुए मज़दूर नेताओं को 'बाहरी तत्व' और 'उग्रवादी' तक की संज्ञा दे रहे हैं। इन कर्मठ युवा नेताओं को मैं जानती हूँ। ये मज़दूर हितों के लिए संघर्षरत न्यायनिष्ठ लोग हैं।

महोदया, आज 9 मई को हज़ारों मज़दूर दो फ़ैक्टरियों की अवैध तालाबन्दी समाप्त करने, मज़दूरों पर से फर्ज़ी मुक़दमे हटाने और मज़दूरों पर गोली चलाने की घटना की निष्पक्ष जाँच और दोषियों के विरुद्ध कार्रवाई की माँग को लेकर जब कमिश्नर कार्यालय की ओर शान्तिपूर्ण 'मज़दूर सत्याग्रह' शुरू करने जा रहे थे, **तो उन पर बर्बर लाठीचार्ज और पानी की बौछार की गयी। शहर में कहीं भी उन्हें इकट्ठा होने से रोकने के लिए पुलिस ने आतंक राज क़ायम कर दिया। कई नेताओं, मज़दूरों को हिरासत में ले लिया गया। इसके बावजूद, शाम 4 बजे मुझे सूचना मिलने तक कई सौ मज़दूर टाउन हॉल, गाँधी प्रतिमा के पास पहुँचकर अनशन की शुरुआत कर चुके थे।**

मायावती जी, मज़दूरों पर दमन का यह सिलसिला तो वास्तव में पिछले दो वर्षों से जारी है, जबसे वे कम से कम कुछ श्रम क़ानूनों को लागू करने की माँग कर रहे हैं। आप स्वयं पता कीजिये कि गोरखपुर के कारख़ानों में क्या कोई भी श्रम क़ानून लागू होता है? यदि इनकी माँग उठाने वाले 'उग्रवादी' हैं तो मैं भी स्वयं को गर्व से 'उग्रवादी' कहना चाहूँगी। इस बार दमन और अत्याचार तो सारी सीमाओं को लाँघ गया है। सत्ता में बैठे लोगों को यदि जनता निरीह भेड़-बकरी दीखने लगती है और इंसाफ़ की आवाज़ उनके कानों तक पहुँचती ही नहीं, तो इतिहास उन्हें कड़ा सबक़ सिखाता है।

मायावती जी, मैं विनम्रतापूर्वक आपको सूचित करना चाहती हूँ कि यदि गोरखपुर के मज़दूरों पर बर्बर अत्याचार बन्द नहीं किया जायेगा, यदि मज़दूरों पर गुण्डों द्वारा गोली-वर्षा के मामले की निष्पक्ष जाँच नहीं होगी, यदि अवैध तालाबन्दी ख़त्म करने के लिए प्रशासन मालिकों को बाध्य नहीं करेगा और यदि मज़दूरों की न्यायसंगत माँगों पर विचार नहीं किया जायेगा, तो मैं स्वयं व्हीलचेयर पर बैठकर मज़दूर सत्याग्रह में हिस्सा लेने जाऊँगी। किसी लोकतान्त्रिक, शान्तिपूर्ण प्रतिरोध के लिए शासन से इजाज़त लेना मैं ज़रूरी नहीं समझती। यदि न्याय की आवाज़ की अनसुनी जारी रहेगी तो आमरण अनशन करके प्राण त्यागना मेरे लिए गौरव की बात होगी। मुझे विश्वास है कि मेरे इस बलिदान से मज़दूरों के संघर्ष को शक्ति मिलेगी और लोकतान्त्रिक अधिकारों के संघर्ष में उतरने के लिए तथा न्याय की लड़ाई में शोषितों-दलितों का साथ देने के लिए बुद्धिजीवी समुदाय के अन्तर्विवेक को भी झकझोरा जा सकेगा।

मायावती जी, मैं आपको धमकी या चेतावनी नहीं दे रही हूँ। सत्ता की प्रचण्ड शक्ति के आगे मुझ जैसे किसी नागरिक की भला क्या बिसात? मैं आपसे अनुरोध कर रही हूँ कि आप अपने स्तर से मामले की जाँच कराकर न्याय कीजिये और सत्ता मद में चूर अपने निरंकुश अफ़सरों की नकेल कसिये। मैं इस न्याय संघर्ष में भागीदारी के अपने संकल्प की आपको सूचना दे रही हूँ और विनम्रतापूर्वक बस यह याद दिलाना चाहती हूँ कि लाठियों-बन्दूकों से सच्चाई और इंसाफ़ की आवाज़ कुछ देर को चुप करायी जा सकती है, लेकिन हमेशा के लिए कुचली नहीं जा सकती।

साभिवादन,

भवदीया,
कमला पाण्डेय
दिनांक : 9/5/2011
सम्पर्क : डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020

मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन 2011 के तहत मज़दूरों की लामबन्दी

मज़दूरों को मिली शुरुआती जीतों से कुछ मिलों के मज़दूरों के हालात में थोड़ा सुधार हुआ। कई कारख़ानों में काम के घण्टे कम होने से मज़दूरों को थोड़ी राहत मिली। कुछ जगहों पर वेतन पर्ची और जॉब कार्ड भी मिलने लगे। मज़दूरी में भी थोड़ी बढ़ोत्तरी हुई। लेकिन कई मामलों में मिल मालिक अपने वायदों से मुकर गये। मज़दूरी में जो थोड़ी बहुत बढ़ोत्तरी हुई भी वह लगातार बढ़ती महँगाई के सामने निष्प्रभावी साबित हो रही थी। 2009 के अन्त से लेकर 2011 की शुरुआत तक गोरखपुर में कोई बड़ा मज़दूर आन्दोलन तो नहीं हुआ लेकिन अलग-अलग कारख़ानों में छिटपुट संघर्ष चलते रहे। इसी बीच गोरखपुर टेक्सटाइल वर्कर्स यूनियन का गठन किया गया जिसमें बरगदवा और गीडा की कई धागा और कपड़ा मिलों के मज़दूर शामिल हैं। बरगदवाँ के अलावा गीडा के भी कई कारख़ानों के मज़दूर संयुक्त मज़दूर अधिकार संघर्ष मोर्चा से जुड़े हैं। वर्ष 2010 में बरगदवाँ और गीडा के मज़दूरों ने गोरखपुर में मई दिवस पर एक विशाल जुलूस निकाला था। उल्लेखनीय है कि बरगदवाँ क्षेत्र के कई फ़ैक्टरी मालिकान ने गीडा में भी बड़ी इकाइयाँ खोलने के लिए निवेश किया हुआ है। मज़दूरों में फैलती चेतना से इनकी परेशानी को आसानी से समझा जा सकता है क्योंकि चन्द वर्षों में इनकी बेतहाशा तरक्की का राज़ मज़दूरों को बुरी तरह निचोड़ने और टैक्स चोरी में ही छिपा है। क़रीब डेढ़ दशक पहले तक स्क्रैप का धन्धा करने वाले अंकुर उद्योग के मालिक अशोक जालान ने 1998 में कुछ करोड़ की लागत से एक प्लाण्ट लगाया था और 10 वर्ष के भीतर वह तीन प्लाण्ट, 15 एकड़ में फैले विशाल कारख़ाने और गोरखपुर के एक वरिष्ठ पत्रकार के अनुसार कम से कम 600 करोड़ की सम्पत्ति के मालिक बन चुके हैं। एक बड़े राष्ट्रीय दैनिक की फ्रैंचाइजी में भी उनकी 40 प्रतिशत भागीदारी है।

पिछले कुछ महीनों से मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन की पहल में बरगदवाँ और गीडा के मज़दूर भी शामिल थे। इस आन्दोलन के तहत 26-सूत्री माँगपत्रक पर दोनों इलाक़ों में मज़दूरों से बड़े पैमाने पर हस्ताक्षर कराये जा रहे थे और 1 मई को दिल्ली के जन्तर मन्तर पर होने वाली रैली में हिस्सा लेने के लिए प्रचार किया जा रहा था। इससे मालिकान बौखलाये हुए थे और मज़दूरों को रैली में भाग लेने से रोकने के लिए डराने-धमकाने से लेकर कुछ मज़दूरों को ख़रीदकर झूठा प्रचार कराने तक की तिकड़मों में लगे हुए थे। इसी बीच 10 अप्रैल 2011 को वी.एन. डायर्स की मिल में मैनेजमेण्ट की ओर से उकसाये गये एक मामले को लेकर हुए विवाद के बाद मालिकों ने कुछ मज़दूर नेताओं को फ़र्ज़ी मामलों में गिरफ़्तार करवा दिया। मज़दूरों के व्यापक विरोध के बाद उन्हें रिहा किया गया। मालिकान ने उसी दिन कारख़ाने की बिजली कटवाकर तालाबन्दी घोषित कर दी और 18 मज़दूरों को निलम्बित कर दिया।

मज़दूरों ने 15 दिन पहले ही सभी कारख़ानों के मैनेजमेण्ट, स्थानीय श्रम कार्यालय और लखनऊ में प्रमुख सचिव, श्रम को पत्र लिखकर मई दिवस की रैली में भाग लेने के लिए छुट्टी माँगी थी। उनका कहना था कि 1 मई को पारम्परिक तौर पर छुट्टी होती है, उन्हें केवल दो दिन, यानी 30 अप्रैल और 2 अप्रैल को अवकाश चाहिए था। पत्र में उन्होंने यह भी प्रस्ताव किया था कि कम्पनी को काम का नुक़सान न हो इसके लिए वे ओवरटाइम, रेस्ट के दिन काम करके या किसी भी अन्य तरीक़े से भरपाई करने के लिए तैयार हैं। इसके बावजूद किसी भी मिल का मैनेजमेण्ट उन्हें छुट्टी देने को तैयार नहीं था। चैम्बर ऑफ़ इण्डस्ट्रीज़ की बैठक में यह मुद्दा उठाया गया और बैठक में बुलाये गये गोरखपुर मण्डल के आयुक्त के. रवीन्द्र नायक ने उद्योगपतियों के सुर में सुर मिलाकर बयान दिया था कि मज़दूरों को भड़काने वाले "बाहरी तत्वों" को बख्शा नहीं जायेगा।

लेकिन मालिकान और प्रशासन की धमकियों के बावजूद क़रीब 2000 मज़दूर 1 मई की रैली में भाग लेने दिल्ली गये। इस आन्दोलन ने मज़दूरों की व्यापक आबादी और आम नागरिकों के सामने इस व्यवस्था का असली चेहरा एक बार फिर नंगा कर दिया। लोगों ने देखा कि किस तरह सरकार, प्रशासन, पुलिस, अदालत, जन-प्रतिनिधि, चुनावी नेता सब मिलकर एक बेहद जायज़ और न्यायपूर्ण आन्दोलन को कुचलने पर आमादा हो गये। मज़दूरों ने महीने भर के दौरान गोरखपुर से लेकर लखनऊ तक, हर स्तर पर बार-बार अपनी बात पहुँचायी लेकिन "सर्वजन हिताय" की बात करने वाली सरकार कान में तेल डालकर सोती रही। मज़दूरों ने देखा कि श्रम विभाग से लेकर पुलिस-प्रशासन तक यहाँ किस तरह मालिकों के चाकर की भूमिका निभाते हैं और मज़दूरों के लिए किसी क़ानून का कोई मतलब नहीं रह गया है। ज़िला से लेकर प्रदेश स्तर तक के अफ़सरों को मिलमालिक अपने इशारों पर नचाते हैं।

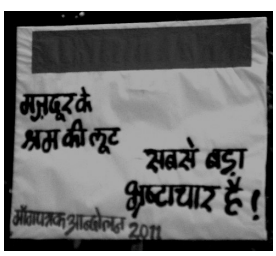

मज़दूरों पर फ़ायरिंग के विरोध में मुख्यमन्त्री मायावती के नाम भेजी गयी पहली याचिका

गोरखपुर में मज़दूरों पर फ़ायरिंग के विरोध में सामाजिक कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों द्वारा शुरू की गयी ऑनलाइन याचिका। 460 प्रसिद्ध न्यायविदों, बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, ट्रेड यूनियनकर्मियों, पत्रकारों आदि के हस्ताक्षरों के साथ इसे 9 मई को मुख्यमन्त्री मायावती के पास भेजा गया।

त्वरित कार्रवाई की माँग : गोरखपुर में मज़दूरों पर कारख़ाना मालिक के भाड़े के गुण्डों द्वारा फ़ायरिंग

सेवा में
सुश्री मायावती,
माननीया मुख्यमन्त्री,
उत्तर प्रदेश शासन

हम अधोहस्ताक्षरी, 3 मई को अंकुर उद्योग लि. (गोरखपुर) के मज़दूरों पर कारख़ाना मालिकों के भाड़े के गुण्डों द्वारा अन्धाधुँध फ़ायरिंग की घटना की कड़ी निन्दा करते हैं जिसमें 19 मज़दूर गम्भीर रूप से घायल हो गये। मज़दूर अपने 18 सहकर्मियों के निलम्बन का विरोध कर रहे थे। कारख़ाना मालिक मज़दूरों को "सबक़ सिखाना" चाहते थे क्योंकि उन्होंने दिल्ली में हुई मई दिवस की रैली में उत्साहपूर्वक हिस्सा लिया था जिसमें मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन 2011 के तहत अपने बुनियादी संवैधानिक और क़ानूनी अधिकारों की माँग करने के लिए देश के अलग-अलग हिस्सों से हज़ारों मज़दूर इकट्ठा हुए थे।

यह घटना पिछले दो वर्षों में गोरखपुर के उद्योगपतियों द्वारा मज़दूरों को अपनी जायज़ माँगों के लिए संगठित होने से रोकने के लिए अपनाये गये हथकण्डों के सिलसिले की ही नयी कड़ी है। लेकिन यह तथ्य आश्चर्यजनक है कि उद्योगपतियों के इन नापाक मंसूबों में स्थानीय राजनीतिक, प्रशासनिक और पुलिस तन्त्र की भी उनके साथ साँठगाँठ है। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि फ़ायरिंग के बाद मज़दूरों द्वारा कारख़ाने की घेराबन्दी करने और गोली चलाने वाले अपराधियों को वहीं घेर लेने के बावजूद पुलिस ने मौक़े पर पहुँचने के बाद अपराधियों को निकल जाने दिया। अपराधियों को गिरफ़्तार करने के बजाय मज़दूरों और उनके नेताओं को फ़र्ज़ी मुक़दमों में फँसाने की कोशिश की जा रही है। स्थानीय भाजपा सांसद योगी आदित्यनाथ के घोर मज़दूर-विरोधी रवैये ने मज़दूरों के घाव पर नमक रगड़ने का काम किया है। जबसे गोरखपुर के मज़दूरों ने दो वर्ष पहले संगठित आन्दोलन शुरू किया था तभी से आदित्यनाथ उसके विरुद्ध स्थानीय मीडिया में ऐसे आरोप लगाते रहे हैं कि यह आन्दोलन "माओवादियों-आतंकवादियों" द्वारा संचालित है और यह दावा करके मामले को साम्प्रदायिक रंग देने की भी कोशिश की है कि आन्दोलन "चर्च के पैसे से चल रहा है।"

गोरखपुर के औद्योगिक मज़दूर नारकीय हालात में काम कर रहे हैं। न्यूनतम मज़दूरी, काम के घण्टे, ओवरटाइम के भुगतान, जॉबकार्ड, पीएफ़, ईएसआई, काम की सुरक्षित परिस्थितियों आदि से सम्बन्धित श्रम क़ानून बस काग़ज़ पर मौजूद हैं। स्थानीय प्रशासन इन क़ानूनों को लागू कराने की अपनी संवैधानिक और क़ानूनी ज़िम्मेदारी निभाने में पूरी तरह नाकाम रहा है। दो वर्ष पहले, इस इलाक़े के मज़दूरों ने श्रम क़ानूनों को लागू करने के लिए संगठित आन्दोलन की शुरुआत की थी। लेकिन मज़दूरों की जायज़ माँगों पर ध्यान देने की बजाय, प्रशासन ने उद्योगपतियों की शह पर आन्दोलन को कुचलने का षडयन्त्र शुरू कर दिया। वार्ता के लिए गये मज़दूर नेताओं को पीटा गया और फर्ज़ी मुकदमों में जेल भेज दिया गया। अनेक जनवादी और नागरिक अधिकार संगठनों तथा बुद्धिजीवियों के आन्दोलन के बाद ही प्रशासन द्वारा नेताओं को रिहा किया गया।

इस बार मज़दूरों को केवल इसलिए गोलियों का सामना करना पड़ा क्योंकि उन्होंने मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन के तहत दिल्ली में मई दिवस की रैली में भाग लेने के लिए दो दिन की छुट्टी ले ली। मालिकान पहले से ही मज़दूरों को धमका रहे थे कि अगर वे रैली में गये तो उन्हें "सबक सिखाया" जायेगा। मण्डल के आयुक्त ने भी बयान दिया कि मज़दूरों को भड़काने वाले "बाहरी तत्वों" को बख्शा नहीं जायेगा। रैली के बाद जो कुछ हुआ उससे इलाक़े में राजनेता-उद्योगपति-प्रशासन के गँठजोड़ का पूरी तरह पर्दाफ़ाश हो गया है।

गोरखपुर के औद्योगिक परिदृश्य में इस समय स्पष्टत: अराजकता व्याप्त है। मुख्यमन्त्री जी, आपने मीडिया में अक्सर बयान दिये हैं कि आतंकवाद के विरुद्ध दृढ़ संघर्ष किया जायेगा। हम आशा करते हैं कि आतंकवाद की आपकी परिभाषा में गोरखपुर में उद्योगपतियों और प्रशासन द्वारा जारी आतंकराज भी आता होगा। क्षेत्र में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए हम माँग करते हैं कि :

- निहत्थे मज़दूरों पर गोली चलाने वाले अपराधियों और उन्हें बुलाने वाले उद्योगपति को गिरफ़्तार कर मुक़दमा चलाया जाये;
- स्थानीय प्रशासन और पुलिस की मिलीभगत सहित इस पूरे मामले की न्यायिक जाँच करवाई जाये और दोषी अधिकारियों को दण्डित किया जाये;
- मज़दूरों के ख़िलाफ़ दर्ज सभी झूठे मुक़दमे तत्काल वापस लिये जायें;
- सभी 18 निलम्बित मज़दूरों को काम पर वापस लिया जाये और दोनों कारख़ाना मालिकों द्वारा अवैध तालाबन्दी समाप्त की जाये।

भवदीय,
अधोहस्ताक्षरी

न्यायमूर्ति राजिन्दर सच्चर, अध्यक्ष, पीयूसीएल; मेधा पाटकर, जनान्दोलनों का राष्ट्रीय समन्वय एवं नर्मदा बचाओ आन्दोलन; डा. बिनायक सेन, उपाध्यक्ष, पीयूसीएल; डा. इलीना सेन, टीचर; गौतम नवलखा, पीयूडीआर; केडी राव, इण्डियन एसोसिएशन ऑफ पीपुल्स लॉयर्स; एसआर नाग, सचिव, पीयूसीएल, झारखण्ड; रवि किरण जैन, वरिष्ठ वकील, सुप्रीम कोर्ट; पीयूसीएल; आर.के. पाल, वकील, छत्तीसगढ़, पीयूसीएल; हिमांशु कुमार, सामाजिक कार्यकर्ता; आलोक अग्रवाल, नर्मदा बचाओ आन्दोलन; प्रभात कुमार, भाकपा (माले-लि); चितरंजन सिंह, अध्यक्ष, पीयूसीएल, उत्तर प्रदेश; पंकज बिष्ट, सम्पादक, समयान्तर; मंगलेश डबराल, कार्यकारी सम्पादक, पब्लिक एजेण्डा; कामतानाथ, लेखक; वीरेन्द्र यादव, लेखक; अखिलेश, सम्पादक, तद्भव; अजित साही, संवाददाता; राजीव रुफुस, वकील, सुप्रीम कोर्ट; आलोक श्रीवास्तव, एडवोकेट ऑन रिकार्ड, सुप्रीम कोर्ट; हर्ष कपूर, साउथ एशिया सिटीजंस वेब, ब्रिटेन; डेबी ब्रेन्नन, रैडिकल विमेन, ऑस्ट्रेलिया, आग्नेय सायल, अधिवक्ता, दिल्ली; एण्डे ओ'कैलाहन, लेफ़्ट पार्टी, जर्मनी; गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव, जनवादी लेखक संघ; मोहिनी मांगलिक, अध्यक्ष, साझी दुनिया; शोभा सिंह, एडवा; अजय सिंह, जन संस्कृति मंच; एस.आर. दारापुरी (सेवानिवृत्त आईपीएस); शैलेन्द्र सागर, सम्पादक, कथाक्रम; अपर्णा, सचिव, दिल्ली समिति सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी; वन्दना मिश्रा (उत्तर प्रदेश) पीयूसीएल; अमलेन्दु उपाध्याय, हस्तक्षेपडॉटकॉम; शाह आलम, जेयूसीएस; अवनीश राय, जेयूसीएस; नदीम अंसारी, शाहनवाज आलम, पीयूसीएल; परमजीत, पीयूडीआर; उज्ज्वल, पीयूडीआर; एनडी पंचोली, पीयूसीएल; शिवाकान्त गोरखपुरी, पीयूसीएल; विद्या भूषण रावत, सामाजिक कार्यकर्ता; अनिल चमड़िया, पत्रकार, प्रोफ़ेसर ए.के. मलेरी, ऑपरेशन ग्रीन हण्ट के ख़िलाफ़ डेमोक्रेटिक फ्रण्ट (पंजाब); विरा साथीदार, रिपब्लिकन पैन्थर्स; अनुराग मोदी, श्रमिक आदिवासी संगठन; नीलांजन दत्ता, एपीडीआर; राजविन्दर, टेक्सटाइल मज़दूर यूनियन, लुधियाना; लखविन्दर, कारख़ाना मज़दूर यूनियन, लुधियाना; डा. जेपी चतुर्वेदी, प्रतुल जोशी, ऑल इण्डिया रेडियो, चन्द्रेश्वर, कवि; रामबाबू, कलाकार; प्रसेन सिंह, विजय कुमार, अनिरुद्ध, रमाशंकर, जागरूक नागरिक मंच, इलाहाबाद; मनोज कुमार सिंह, जन संस्कृति मंच, गोरखपुर फ़िल्म सोसायटी; जमीर; राजीव लोचन साह, सम्पादक, नैनीताल समाचार; इलियट आइजनबर्ग; जॉन वुड; राजर्षि चक्रवर्ती; छिन्दरपाल; अमृतपाल; महामाया; भूपिन्दर सिंह, सीटीयू वर्कर्स यूनियन, चण्डीगढ़; गौरव बन्सल, महिन्द्रा सत्यम; रंजीत सिंह, चण्डीगढ़; राम रतन, मोहाली; सैमुअल जॉन, पीपुल्स थिएटर, चण्डीगढ़; नमिता, दिशा छात्र संगठन, चण्डीगढ़; कमल, नौजवान भारत सभा, चण्डीगढ़; राजिन्दर, पंजाब युनिवर्सिटी, चण्डीगढ़; आशुतोष सिंह; जेस्सी नुटसन, अमेरिका; लुसी कॉक्स, अमेरिका; विनय भट्ट, जोया जॉन, शोधकर्ता; देवव्रत बनर्जी, कोलकाता; आशुतोष प्रताप सिंह; मीनाक्षी; हरजिन्दर सिंह; शुभदीप कुमार, हैदराबाद विश्वविद्यालय; मुन्ना कुमार पाण्डे, दिल्ली विश्वविद्यालय; प्रेम प्रकाश, सतीश कुमार; चन्द्रशेखरन नायर, मुम्बई; अनिर्वाण कर, ईश मिश्रा, जनहस्तक्षेप; भूमिका चौहान, छात्र, दिल्ली; पी. विजयन; ज्ञानेंद्र ओझा; ऐनी स्लेटर, रैडिकल विमेन, अमेरिका; शालिनी, जनचेतना; तर्कवागीश; अनुराग ठाकुर; नीरज जैन; विनय, जेएनयू; अशोक कुमार राणा; सूर्य प्रकाश, क्रालोस; मयंक दीक्षित; पीयूष; समय; नेहा, स्त्री मज़दूर संगठन; सनी सिंह, दिल्ली विश्वविद्यालय; सी.एल. गुप्ता, स्वतन्त्र मिश्र; विशाल वातवानी; पाली राज, शाकम्भरी, स्त्री मुक्ति लीग; लाल बहादुर; राजीव कुमार; दधीचि पटेल; अशोक पाण्डे, हल्द्वानी; राज कुमार, गुड़गाँव; किरण त्रिवेदी; सुमित सैनी; शाहनवाज मलिक; अंकित कुमार वार्ष्णेय, अभिषेक श्रीवास्तव, पत्रकार; नवीन प्रकाश; प्रवीण त्रिवेदी; पृथ्वी; शिवार्थ पाण्डे, दिशा छात्र संगठन, लखनऊ; अरुण कुमार; गौरव सोलंकी, संवाददाता, दिल्ली; विमला सक्करवाल; जितेंद्र; कात्यायनी, राहुल फाउण्डेशन; चन्द्रशेखर चौबे; विभा सिंह, मुम्बई; वेद प्रकाश सिंह; विजय प्रकाश सिंह, संपादक, लोक सुरभि; प्रभाकर पाण्डेय, कामता प्रसाद; भूपेन सिंह, पत्रकार; अभिषेक श्रीवास्तव; मनोज पटेल; प्रशान्त; जय पुष्प; माधोदास; क्रिस्टीन टिकनर; आशुतोष कुमार; रवि भूषण पाठक; अखिलेश प्रताप सिंह; सुयश सुप्रभ; आलोक कौशिक; डा. प्यारे मोहन शर्मा, पटियाला; रोहित; सौरव बनर्जी; आनन्द सिंह, पुणे; सत्यम, राहुल फाउण्डेशन; सन्दीप, पत्रकार; बिमल राय, चौथी दुनिया; रमेश शर्मा; पुनीत; इंद्रसेन वर्मा; दीपक; विभास कुमार; चंदन सिंह; निहार भारद्वाज; अवनीश सिंह, निदेशक, सार्थक सिविल एकेडेमी, इलाहाबाद; रवि भारद्वाज; ममता साहनी; ममता, व्यवसायी; उस्मान; प्रणव प्रियदर्शी; डा. हर्बर्ट पिमलॉट, विल्फ्रेड युनिवर्सिटी फ़ैकल्टी एसोसिएशन, कनाडा; आर चेतनक्रान्ति; जीत बहादुर, अधिवक्ता उच्च न्यायालय, इलाहाबाद; केके राय, वरिष्ठ एडवोकेट उच्च न्यायालय, इलाहाबाद; ताराचंद, इलाहाबाद उच्च न्यायालय; प्रदीप वर्मा; हरिकेश; विजय सिंह, फ़ोरम फ़ॉर डेमोक्रेटिक स्ट्रगल; राम गौतम, मुम्बई; सफवान आमिर, दिल्ली स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स; भाषा सिंह, जन संस्कृति मंच; मुकुल सरल, जन संस्कृति मंच; मनीषा श्रीवास्तव, नोएडा; प्रमोद कुमार; डा. सुधीर सक्सेना, दुनिया इन दिनों; पूर्वी; नितिन कुलश्रेष्ठ; सूर्य मोहन कुलश्रेष्ठ, नीपा रंगमण्डली, लखनऊ; उपेन्द्र स्वामी; धीरज कुमार; पीटर एगलिन, विल्फ्रेड युनिवर्सिटी फ़ैकल्टी एसोसिएशन, कनाडा; आलोक अग्रवाल, नर्मदा बचाओ आन्दोलन; विमला, स्त्री मज़दूर संगठन; एन.के. जीत, लोक मोर्चा पंजाब; जावेद इनायत; हरीश, लुधियाना; इन्दर; अवतार; संजीव, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़; हरप्रीत, रैशनलिस्ट सोसायटी, पंजाब; बलकार सिद्धू, पंजाबी लेखक सभा, चण्डीगढ़; राहुल दारापुरी, जसवन्त मोहाली, पंजाबी लेखक; संजय, एडवोकेट, हाईकोर्ट, चण्डीगढ़; वकास जहीर, आरलेट्टा मरे; प्रशान्त कुमार, एनईआईटी, ग्रेटर नोएडा; सुनील शर्मा, अनिल शर्मा, राजीव तिवारी, प्रीति सोनी, अनन्त मिश्रा, रामचन्द्र भाटिया, हिन्दुस्तान; सुशील दोशी, जनसन्देश टाइम्स; खजान सिंह, अध्यापक; उग्रनाथ नागरिक; निहाल सिंह; जी.के. चक्रवर्ती; उत्कर्ष सिन्हा, सामाजिक कार्यकर्ता; पारसनाथ विश्वकर्मा; किरण शाहीन, मीडिया कार्य समूह; महिपाल सिंह, पीयूसीएल; सिद्धार्थ नारायण, आल्टरनेटिव लॉ फ़ोरम; बबलू लोइतोन, ह्यूमन राइट्स एलर्ट; टी. संजीव; डा. मीसा शिवा; सुनील कुमार, पत्रकार; पास्कल तिर्की, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट; मदन मोहन बैरवा, पीयूसीएल; अनिल शर्मा, पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ्रण्ट ऑफ़ इण्डिया; विपिन कुमार राय, शहरी अधिकार मंच; सुब्रत डे, एक्शन एड भारत; एम.पी. दुबे, ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क; उमेश चन्द्र, जी.पी.एफ.एन.; प्रोफ़ेसर वाई.के. रंजन, भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ राष्ट्रीय अभियान; रमाकान्त शोल्डा, गोण्डा शान्ति परिषद; सुभाष गौतम, समयान्तर; शारिक नकवी, डीडी कश्मीर; शिखा, छात्र; जोशना, क्रिटिकल क्वेस्ट; बिलाल, अहमदाबाद; शिव दास, दैनिक जागरण, दिल्ली; आर दुबे, पीयूसीएल; बाबूलाल शर्मा, जीसीसी; एस.एम. जकी अहमद, हेजार्ड्स सेण्टर; राजेश जौहर; नेमिचन्द, पीयूसीएल; विजय अग्रवाल, लेखक; पीबी दीवान, एडवोकेट; शाहीन नजर, पीयूसीएल; सुनील प्रभाकर, यूथ फ़ोर जस्टिस; पंकज, टी.आई.एस.एस. मुम्बई; मुकेश, हेजार्ड्स सेण्टर; अलका, पीयूसीएल; निशान्त कुलहरि, एनएलआईयू, भोपाल; रमेश यादव, युवा संवाद; कृष्ण ठाकुर, टी.आई.एस.एस. मुम्बई; प्रमोद कुमार, ग्रीन फ्लैग; भूपेन्द्र सिंह, एन.ए.पी.एम.; नागेश्वर प्रसाद, प्रोग्रेसिव पीपुल्स इनिशिएटिव, पटना; वसन्ता, महिलाओं पर हिंसा के ख़िलाफ़ समिति; राजीव यादव, पीयूसीएल (उत्तर प्रदेश); अनुज शुक्ला, स्वतन्त्र पत्रकार; एन.एस. तन्वी, पीयूसीएल (तमिलनाडु); वी सुरेश, पीयूसीएल (तमिलनाडु); अर्जुन प्रसाद सिंह, पीडीएफ़आई; नन्द किशोर सिंह, पीयूसीएल (बिहार); शिव सिंह, पीयूसीएल (राजस्थान); एन. बाबैया, पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ़ोरम कर्नाटक; निंगलुन, इंसाफ़; जया विंध्यालय, पीयूसीएल (आन्ध्रप्रदेश); डी प्रकाश पीयूसीएल (आन्ध्र प्रदेश); धीरेन सदोरपन, आईडब्ल्यूआरएफ; रोनिद, आईटी; टी संजीव, शोभन (दिल्ली विश्वविद्यालय); रितुपन, (डीएसयू, जेएनयू); मनभंजन, (डीएसयू, जेएनयू); राहीला नारचूर, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट; आरती चोकसी, पीयूसीएल बंगलोर; तंजील रहमान, पीयूसीएल बंगलोर; तबरेज मालावत, अंकिता बाफना, केआईआईटी लॉ स्कूल; मरियम शाहीन, एएमयू; सन्तोष कुमार, मज़दूर पत्रिका; कुंवर कमल भाई; बनज्योत्सना; राशिद हुसैन; अरुण ओरांव, जेयूसीएस; राजेश सिन्हा, पत्रकार; शैलेन्द्र पाण्डेय, फ़ोटो पत्रकार; हेम मिश्रा, डीएसयू; अजय शर्मा, पीयूसीएल; पिंकी पाल; डा. आर दास; सोहन लाल; आशीष गुप्ता, पीयूडीआर; अनुश्रुत, निशा मैत्रेयी, उमिं निनाद, एन मिश्रा, पीयूसीएल; अजय पाल सिंह, पीडीएफ़आई; नागेन्द्र प्रसाद, प्रोग्रेसिव पीपुल्स इनिशिएटिव; समृद्धि रॉय, एनएपीएम (बिहार); विजय अग्रवाल, एस.बी. पाठक, पीयूसीएल, झारखंड; फवाज शाहीन; ओजस एसवी; मनभंजन जेएनयू, राज किशोर, आरडीपी; राजकुमार डोगरा, एनएफ़आईडब्ल्यू, राजस्थान; ए.बी.ए. सादेद, अचला सव्यसाची, संधान; जावेद इकबाल, संवाददाता; केपी शशि, दृश्य खोज; डीवी शर्मा, सचिव, पीयूसीएल दिल्ली; रमेश कुमार शर्मा, इंसाफ़; हरकेश बुगालिया; राजस्थान निर्माण मज़दूर संघ; रामाश्रय सिंह, महासचिव, बिहार पीयूसीएल; यावर, सम्पादक, मानवाधिकार पत्रिका; अबू फरीजान, दलित और अल्पसंख्यक केन्द्र, जामिया मिलिया; रिनचिन, लैंगिक हिंसा एवं राजकीय दमन के ख़िलाफ़ महिलाएं; इंदु प्रकाश सिंह, इंदुर लोबल सोशल सर्विस सोसायटी; सपना रहीम; पूर्वी; सत्या; एनडी पंचोली, सिटीजंस फ़ोर डेमोक्रेसी; मुकुल मांगलिक, शिक्षक, दिल्ली विश्वविद्यालय; जयपाल नेहरा, पीयूसीएल; काशिफ, पीयूसीएल, पटना; केके त्रिपाठी, पीयूसीएल; ए, एम. गुहुनु; मरियम शाहीन; मिथिलेश कुमार, कलकत्ता विश्वविद्यालय; सन्दीप नैयर; अमन; एन कुमार; समीर; महेश वर्मा; असित शुक्ला; सुनीत कुमार; कामख्या पाण्डे; शिवानी; आकांक्षा पारे काशिव; प्रभदीप देओल; पुनीत शर्मा; नवीन कुमार, बादाम मज़दूर यूनियन; अरविंद राठी, दिशा छात्र संगठन; सत्यनारायण, टी.आई.एफ.आर.; सुरजीत सहोता, इण्डो कनाडियन वर्कर्स एसोसिएशन; हसमीत सिंह, रिवोल्यूशनरी यूथ एसोसिएशन पंजाब; डा. दर्शन खेड़ी, ए.एफ.डी.आर.; जसदीप सिंह; तुषार; राजेश रमण; विक्रम शर्मा; राजेश सिंह; प्रियदर्शन; अशोक चौधरी, सीपीआई एमएल; हर्षवर्धन शर्मा; अमित कुमार; अजय पाल; जोहरा; रोहित प्रजापति; प्रतीक अली; राजेश सिंह; मयंक; शमीमुद्दीन अंसारी; त्रिभुवन पांडेय; कंचन जोशी; संजीव कुमार; शफीकुर रहमान खान, डा. ए शफीक; स्नेहा शर्मा, दिल्ली विश्वविद्यालय; संविदा लाहिड़ी; प्रसन्ना; जी. सुमनलता।

मज़दूरों के दमन, गिरफ़्तारियों व अवैध तालाबन्दी के विरोध में दूसरी याचिका

गोरखपुर में मज़दूरों के दमन, मज़दूर नेताओं की झूठे आरोपों में गिरफ़्तारी और प्रशासन के खुले सहयोग से जारी दो कारख़ानों की अवैध तालाबन्दी के विरोध में मुम्बई की वरिष्ठ वकील एवं सामाजिक कार्यकर्ता कामायनी बाली-महाबल द्वारा शुरू की गयी ऑनलाइन याचिका। सैकड़ों बुद्धिजीवियों, न्यायविदों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, ट्रेडयूनियन कर्मियों, पत्रकारों आदि के हस्ताक्षरों के साथ इसे 1 जून को मुख्यमन्त्री मायावती के पास भेजा गया।

सेवा में
सुश्री मायावती,
मुख्यमन्त्री,
उत्तर प्रदेश

आदरणीय महोदया,

हम, अधोहस्ताक्षरी, गोरखपुर के ज़िला प्रशासन और पुलिस तन्त्र द्वारा गोरखपुर के मज़दूर आन्दोलन के दमन की कठोर निन्दा करते हैं। गोरखपुर के मज़दूरों ने गत 16 मई से गोरखपुर के बरगदवा औद्योगिक क्षेत्र की अंकुर उद्योग लिमिटेड नामक फ़ैक्टरी के मालिक द्वारा भाड़े के गुण्डों से करवायी गयी फ़ायरिंग में 19 मज़दूरों के घायल होने की घटना के ख़िलाफ़ शान्तिपूर्ण 'मज़दूर सत्याग्रह' की शुरुआत की थी। लेकिन मज़दूरों की जायज़ माँगों पर ध्यान देने के बजाय ज़िला प्रशासन बेशर्मी के साथ फ़ैक्टरी मालिकों का पक्ष ले रहा है और इस शान्तिपूर्ण आन्दोलन को कुचलने पर आमादा है।

मज़दूर सत्याग्रह के अंग के तौर पर मज़दूर 16 मई की सुबह से आमरण अनशन पर बैठे थे। लेकिन 20 मई को मज़दूरों को तितर-बितर करने के लिए डीआईजी की मौजूदगी में पुलिस ने शान्तिपूर्ण सत्याग्रह पर भारी लाठीचार्ज किया और 73 मज़दूरों को हिरासत में लिया गया। इनमें से अधिकतर को देर रात रिहा कर दिया गया लेकिन बी.एच.यू. की एक छात्र श्वेता, एक महिला मज़दूर सुशीला देवी को गिरफ़्तार कर लिया गया। मज़दूर नेता तपीश मैन्दोला को पुलिस ने किसी स्थान से उठा लिया था और अगले दिन सुबह तक उनकी गिरफ़्तारी नहीं दिखायी गयी थी। दोपहर में अचानक तपीश को न्यायालय में पेश कर दिया गया। पुलिस ने सभी मज़दूर नेताओं के ख़िलाफ़ आत्महत्या के प्रयास का मामला दर्ज किया है। यह बेहद हास्यास्पद है क्योंकि अधिकतर गिरफ़्तार नेता वे हैं जो अनशन पर बैठे ही नहीं थे। श्वेता और सुशीला देवी का स्वास्थ्य पांच दिनों की भूख हड़ताल से काफ़ी ख़राब हो गया था और बाद में उन्हें जमानत पर रिहा कर दिया गया। बाक़ी 12 मज़दूरों को जेल भेज दिया गया है। उल्लेखनीय है कि कुछ पुलिस और प्रशासन के अधिकारी काफ़ी समय से मज़दूर नेताओं को लगातार 'गम्भीर परिणामों' की धमकी दे रहे थे। वे विशेष रूप से तपीश, प्रमोद कुमार और प्रशान्त को लक्ष्य बनाये हुए थे और उनपर 'माओवादी-अराजकतावादी' होने का ठप्पा लगा रहे थे।

21 मई को, जब सैकड़ों मज़दूर एक पूर्वघोषित कार्यक्रम के लिए ज़िला कलेक्टर के कार्यालय की ओर बढ़ रहे थे, तो पुलिस ने अनेक स्थानों पर उनपर लाठीचार्ज किया और उन्हें एकत्र होने से रोका। इसके बाद मज़दूरों ने टाउन हॉल पर गांधी प्रतिमा के पास धरने पर बैठने का प्रयास किया लेकिन पुलिस ने उन्हें वहाँ भी पहुँचने से रोकने के लिए बल प्रयोग किया। कई घण्टों तक, ज़िला कलेक्टर का कार्यालय पुलिस छावनी में तब्दील रहा और पुलिस पास-पड़ोस से मज़दूरों को खोज-खोजकर भगाती रही। मज़दूरों जैसे दिखने वाले चार-पाँच लोग जहाँ भी खड़े दिखायी देते पुलिस लाठियाँ लेकर उनपर बरस पड़ती थी। आतंक का यह नंगा राज्य पूरे दिन क़ायम रहा। हालाँकि गिरफ़्तार मज़दूर नेताओं में से ज़्यादातर को छोड़ दिया गया लेकिन तपिश सहित 12 मज़दूर नेता अभी भी जेल में हैं और उन्हें झूठे आरोपों में फँसाने की साज़िश की जा रही है। यह बेहद अफ़सोसनाक बात है कि क़ानून-व्यवस्था के बजाय गोरखपुर में नंगा आतंक राज्य व्याप्त है। मज़दूरों पर फ़ायरिंग की घटना के दो सप्ताह बीतने को आ गये हैं लेकिन अपराधियों को पकड़ने के लिए पुलिस ने अबतक कोई प्रयास नहीं किया है। उन अधिकारियों के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई नहीं शुरू की गयी है जिन्होंने फ़ायरिंग करने वाले गुण्डों को भागने में मदद की थी जबकि पुलिस के पहुँचने तक मज़दूरों ने उन्हें घेरकर रखा था। हालाँकि, 9 मई को मज़दूरों के भारी प्रतिरोध के बाद अंकुर उद्योग का मालिक मनमाने तरीक़े से निष्कासित किये गये मज़दूरों को वापस लेने को विवश हो गया, लेकिन वी.एन. डायर्स की दो फ़ैक्टरियों में अभी भी अवैध तालाबन्दी चल रही है और उनके 18 निष्कासित मज़दूरों को वापस काम पर नहीं लिया गया है।

इन दुखद परिस्थितियों के मद्देनज़र हमारी आपसे माँग है कि आप तुरन्त इस मामले में हस्तक्षेप करें और निम्नलिखित क़दम उठाकर गोरखपुर में क़ानून-व्यवस्था बहाल करें :

- मज़दूर नेताओं को तुरन्त रिहा किया जाये और उनके ख़िलाफ़ दर्ज झूठे मुक़दमे वापस लिये जायें
- 3 मई को मज़दूरों पर गोली चलाने वाले अपराधियों को गिरफ़्तार किया जाये
- गुण्डों को भागने में मदद करने वाले अफ़सरों के ख़िलाफ़ कार्रवाई की जाये
- फ़ायरिंग की घटना और दमनात्मक कार्रवाई की न्यायिक जाँच करवाई जाये
- घायलों को मुआवज़ा दिया जाये
- वी. एन. डायर्स की दो फ़ैक्टरियों की तालाबन्दी समाप्त की जाये और 18 निष्कासित मज़दूरों को काम पर वापस लिया जाये।

भवदीय,
अधोहस्ताक्षरी

कामायनी बाली-महाबल (मुम्बई), नीलोफ़र भागवत (मुम्बई), राहुल वर्मन (कानपुर), अंजलि मोण्टीरो (मुम्बई), गौतम गांगुली (कोलकाता), जेवियर डायस (रांची), सुधा भारद्वाज (बिलासपुर छत्तीसगढ़), डा. पुण्यब्रत गुन (कोलकाता), ज्योति पुनवानी (मुम्बई), दीपांकर चक्रवर्ती (सम्पादक, अनीक, कोलकाता), शम्सुल इस्लाम (दिल्ली), नीलिमा शर्मा (दिल्ली), मधुरेश कुमार (एनएपीएम, दिल्ली), बी.आर. बापूजी (हैदराबाद), जावेद इकबाल (मुम्बई), जे. केशव (बंगलौर), दीया उबेराय (मुम्बई), रोमा (सोनभद्र), शान्ता भट्टाचार्जी (सोनभद्र), राधा होल्ला (नोएडा), रंजनी कमला मूर्ति (चेन्नई), फ्रेडरिक डिसूजा (एल्महर्स्ट), प्रो. अली सैयद (जगदलपुर), सुभाष गाताडे (दिल्ली), सन्दीप (दिल्ली), राजशेखर जम्मालादाका (यूएसए), अमनदीप सिंह (अमृतसर), विजय प्रकाश सिंह (मुम्बई), बालाजी नरसिम्हन (यूएसए), विभा सिंह (मुम्बई), प्रवीण, (मुम्बई), मुनीश, विमला सक्करवाल, अभय शुक्ला (पुणे) जय पुष्प (दिल्ली), निधि (मुम्बई), चौ. नरेन्द्र (हैदराबाद), पृथ्वी (पीटीआई, दिल्ली), महताब आलम (दिल्ली), लखविन्दर (लुधियाना), अशोक पाण्डे (हल्द्वानी), विवेक सुन्दरा (मुम्बई), अनिमेष बहादुर (मुम्बई), सफवान आमिर (दिल्ली), अवतार गिल (कनाडा), शहाब कलीम (कोलकाता), शुक्ला सेन, एकता (मुम्बई), महेश कुमार (कानपुर), एस. शेषन (मुम्बई), फहद (हैदराबाद), कामायनी (मुम्बई), कविता कौशिक (पुणे), अभिजीत गुप्ता (कोलकाता), एशले टेलिस (नई दिल्ली), आमिर रिजवी (मुम्बई), कामता प्रसाद (लखनऊ), ललित सती, ममता साहनी (दिल्ली), आनन्द सिंह (पुणे), आरती चोक्सी (बंगलोर), सुमित रॉय (कोलकाता), सलीम हमजा साबूवाला (मुम्बई), उमा वी चन्द्र (बंगलोर), कृष्णकुमार रामकृष्णन (तिरुअनन्तपुरम), सुतापा मजूमदार (पुणे), सुब्रत घोष (कोलकाता), मयंक दीक्षित (गुड़गाँव), सालेह मैमन (यूनाइटेड किंगडम), प्रशान्त (मुम्बई), सुधीर पांडेय (नई दिल्ली), प्रकाश सिंह रावत (नई दिल्ली), कृष्णा (मुम्बई), एसएम ज़की अहमद (नई दिल्ली), अरुण संधू (मेरठ), अभिनव यादव (मुम्बई), नितिन कुमार (मुम्बई), धीरज कुमार (दिल्ली), परमजीत सिंह (दिल्ली), सुंदर (चेन्नई), राज कुमार (गुड़गाँव), अभिनंदन जैन (अम्बाला सिटी), कुमारपाल जैन (अम्बाला), सत्यनारायण (मुम्बई), इन्द्रजीत झा (दिल्ली), गिरीश जोशी (दिल्ली), समर (पंजाब), कस्तूरी बसु (यूएसए), श्रीप्रकाश (रांची), बॉबी रमाकान्त (लखनऊ), जे.ए.ओ.आर. (जादूगोड़ा), सोहेब लोखंडवाला (मुम्बई), सन्नी सिंह (दिल्ली), भुवन वेणु (नई दिल्ली), डा. सिद्धार्थ गुप्ता (कोलकाता), प्रिय रंजन (लखनऊ), प्रशान्त (मुम्बई), प्रेम प्रकाश (दिल्ली), अमलेन्दु उपाध्याय (दिल्ली), राम सिंह बिन्द (दिल्ली), नवीन प्रकाश (गाजियाबाद), अजय (दिल्ली), संजय श्रीवास्तव (लखनऊ), शाहबाज खान (नई दिल्ली), सुशान्त हालदार (चेक गणराज्य), चन्द्रशेखर नायर (नवी मुम्बई), आशीष रंजन झा (मुम्बई), रणविजय (लखनऊ), ज्ञानेन्द्र ओझा (नोएडा), तर्कवागीश (गुड़गाँव), पर्यटक ड्राइवर यूनियन (वाराणसी), गोकुल दलित (वाराणसी), मानव किरण मिश्र (वाराणसी), वादा फ़ाउण्डेशन (लखनऊ), किरन उपाध्याय (वाराणसी), अंशुमान सिंह (लखनऊ), प्रशान्त कुमार (ग्रेटर नोएडा), राजविन्दर (लुधियाना), सतीश कुमार (गुड़गाँव), ममता दाश (नई दिल्ली), अनिर्बान प्रधान (मेदिनीपुर), इन्दिरा सी (दिल्ली), गरिमा गुप्ता (दिल्ली), साकेत (दिल्ली), आनन्दरूप घोष (कोलकाता), मोहन सिरोया (मुम्बई), कुलदीप गौतम (गाजियाबाद), अभिषेक (गुड़गाँव), सायन भट्टाचार्य (कोलकाता), स्टीफ़न कार्डवेल (यूके), बनजीत हुसैन (दिल्ली), पुष्पा अचन्ता (बंगलौर), डा. डी मंजीत (नई दिल्ली), आलोक श्रीवास्तव (नई दिल्ली), डा. अशोक कुमार मोइत्रा (कोलकाता), अनाविला (सिंगापुर), श्रीकान्त चौधरी (मुम्बई), प्रभाकर कृष्णमूर्ति (चेन्नई), मुथम्मा देवाया (बंगलौर), शालिनी (लखनऊ), जयन्त दास (हावड़ा), जमीर (लुधियाना), सुब्रत (लखनऊ), अंजलि (दिल्ली), शिवार्थ पांडेय (लखनऊ), डा. जे सील (कोलकाता), पवन वर्मा (इलाहाबाद), हरिंदर पाल सिंह ईश्वर (चंडीगढ़), लल्लन बघेल (चंडीगढ़), शीतल जैन (गाजियाबाद), राहुल दारापुरी (लखनऊ), सोमू कुमार (यूएसए), मनाली चक्रवर्ती (कानपुर), अनुराग (पुणे), वसुंधरा (नई दिल्ली), गौरव छाबड़ा (चंडीगढ़), प्रीति के (मुम्बई), लीजा क्लार्क (यूएसए), राकेश रंजन (दिल्ली), तनुश्री गंगोपाध्याय (अहमदाबाद), राजेन्द्रन (यूएसए), सत्यम (दिल्ली), उमंग कुमार (यूएसए), सुमन्त भट्टाचार्य (सिलीगुड़ी), सुनील (वर्धा), विप्लव (अल्मोड़ा), सौरव बनर्जी (नई दिल्ली), राजदेव चतुर्वेदी (आजमगढ़), विजय अग्रवाल (दिल्ली), पैट मुर्तांग (कनाडा), सरित बानिक चौधरी (कल्याणी), इलावर्ती मनोहर (बंगलोर), गौरव जैन (गुड़गाँव), सन्तोष कुमार (नई दिल्ली), सन्नी सिंह (दिल्ली), शाम (गाजियाबाद), राजकुमारी अस्थाना (मुम्बई), गायत्री सिंह (मुम्बई), वरुण खिमानी (अहमदाबाद), श्रद्धा (पुणे), जगदीश जी चंद्रा (बंगलोर), वजी चौधरी (यूएसए), एकादशी प्रधान (कनाडा), नीलिमा डीसिल्वा दलवी (मुम्बई), प्रवीण सिंह (दिल्ली), मनदीप कुमार (नोएडा), पास्कल टिर्की (दिल्ली), ध्वजेंद्र धवल (नई दिल्ली), चन्द्रा (कानपुर), रामदास राव (बंगलोर), चिन्मय कुमार हाजरा (मेदिनीपुर), श्रद्धांशु शेखर (बालाघाट), हेमन्त (गाजियाबाद), आशीष (कानपुर), शाहीन नजर (ग्रेटर (नोएडा), मेजर जनरल (सेवानिवृत्त), एस.जी. वोंबातकेरे (मैसूर), प्रो. जगमोहन सिंह (लुधियाना), कुमार विशाल (नोएडा), नागार्जुन (दिल्ली), एलन राए (स्कॉटलैंड), उर्विजा (हैदराबाद), बी.वी. सीताराम (मंगलौर), रिचा मिनोचा (शिमला), इकबाल पाठक (धनौला), वीणा त्रिपाठी (दिल्ली), कोशिश चौरिटेबल ट्रस्ट (पटना), आर.एन. झा (देहरादून), पिंकी (जयपुर), शुभ्र मलिक (कोलकाता), शुभा शमीम (पुणे), अर्चना शेखर (चेन्नई), ईश मिश्र (दिल्ली), प्रसेन सिंह (इलाहाबाद), राजेश सिंह (नई दिल्ली), सोमनाथ मुखर्जी (कोलकाता), आदिल क़ुरैशी (इंदौर), वकास (कराची), एन.डी. पंचोली (नई दिल्ली), शिवानी (ऋषिकेश), अरुणिमा चौधरी (कोलकाता), विवेकानंद (नोएडा), नरेंद्र मेहता (वाराणसी), गौरव बाजपेयी (दिल्ली), कैरल मर्फी (आयरलैंड), अमित कुमार शिंदे (लातूर), सुकुमार चंद्रा (खड़गपुर), कंचन (हल्द्वानी), अरुण (त्रिशूर), श्रीप्रकाश जे. (नई दिल्ली), मिनीमोहन मोहन (कोल्लम), अंजन मुखोपाध्याय (कोलकाता), ज्योफ गेस्ट जिस्बॉर्न (ऑस्ट्रेलिया), मिलन मंडल (नीदरलैंड), जितिन (गाजियाबाद), मीनाक्षी (दिल्ली), करिश्मा भारद्वाज (बंगलोर), आशुतोष (इलाहाबाद), मित्र, गुलशन कुमार (मंडी गोबिंदगढ़), डा. देबाशीष दत्त (कोलकाता), चमन लाल (मंडी गोबिंदगढ़), अशोक कुमार (मंडी गोबिंदगढ़), जैस्मीन (लुधियाना), कनिष्क पॉल मजुमदार (कोलकाता), नदीम (दिल्ली), जे राजावेलु (चेन्नई), मृदुला द्विवेदी (मुम्बई), सुमित कुमार (गाजियाबाद), विजय (जौनपुर), अनिरुद्ध राजभर (बलिया), राम गौतम (मुम्बई), डा. प्रमोद कुमार (मिर्जापुर), दीपक (इलाहाबाद), पुनीत (इलाहाबाद), रमेश (इलाहाबाद), अवनीश सिंह (इलाहाबाद), चंदन (इलाहाबाद), रवि भारद्वाज (इलाहाबाद), एड. जीत बहादुर (इलाहाबाद), के. के. रॉय (इलाहाबाद), अनुराग चौहान (गाजियाबाद), जसवीर सिंह (लुधियाना), सत्येन्द्र शर्मा (गाजियाबाद), दीना नाथ गुप्ता (गोरखपुर), अर्जुन प्रसाद सिंह (दिल्ली), ऐनी स्लेटर (अमेरिका), विज पारस (चंडीगढ़), स्वातिलेखा (बंगलोर), एन.के. जीत (बठिंडा), संदीप चौबे (सिलीगुड़ी), कपिल स्वामी (दिल्ली), शालिनी गेरा (दिल्ली), राजीश कोल्लाकण्डी (कालीकट), मनोरंजन (कोरपुट, उड़ीसा), विकास (गोरखपुर), लता कुमारी (नई दिल्ली), डा. शान्तनु घोष (कोलकाता), वकास जहीर (पाकिस्तान), सरिता (बंगलौर), कावेरी राजारामन इन्दिरा (दिल्ली), तारिक अमीना सुलेमान (बंगलोर), विनय भट्ट (बोस्टन), कविता (दिल्ली), डा. शफी उल्लाह खान (बालाघाट), ऐमान सिंह (इलाहाबाद), प्रथमेश (बंगलोर), बूटा सिंह (पंजाब), सौन्दर्य (बंगलोर), गौरव सिंह (दिल्ली), गगन (दिल्ली), रजत खन्ना (उदयपुर), रमेश नंदवाना (उदयपुर), आशीष गुप्ता (गोंडा), आशीष कुमार शुक्ला (लखनऊ), निमिषा द्विवेदी (ठाणे), विनय पांडे (ऑस्टिन), अक्षय राणे (ऑस्टिन), सिद्धार्थ (बंगलौर), हिमानी (दिल्ली), इश्तेयाक (पटना), रवि गंगावरापु (न्यू जर्सी), के. बाबू राव (हैदराबाद), डी. गैब्रिएल (मदुरै), कविता श्रीवास्तव (जयपुर), अखिला (बंगलोर), वेद प्रकाश वटुक (बर्कले), जाहिद शफी अंसारी (नई दिल्ली), वेंकटेसन एस, (अमेरिका). कार्ल नॉर्थ (स्विंडन, यूके), देवेश रंजन (वाराणसी), पुलकित मोगा (साहिबाबाद), शरत जी लिन (यूएसए), अब्दुल माबूद (नई दिल्ली), वरुण शैलेश (नई दिल्ली), चित्रंगना चहल (नई दिल्ली), प्रताप बहादुर (फरीदाबाद), संदीप नय्यर (नवाँशहर), डेविड जॉनसन (यूएसए), सुरजीत सिंह (बलचौत), कीर वलेरी (वियना), नवनीत कुमार मेहता (मुम्बई), मदन केशरी (नई दिल्ली), सुशान्त (नई दिल्ली), डी सिंह (कॉवेंट्री), हाइन्ज लाइटनर (वियना), रेग मैकेड (टोरंटो), फोएब जो मारिया सांचेज (फिलिपींस), अशोकेंदु सेनगुप्ता (कोलकाता), एम.जे. विजयन (नई दिल्ली), जूही जिन्दल (कोटा), माइक बेलार्ड (ऑस्ट्रेलिया), प्रसन्न चौधरी (देवघर)...

दिल्ली में जनसंगठनों ने उत्तर प्रदेश भवन पर प्रदर्शन कर ज्ञापन सौंपा

गोरखपुर में मज़दूरों पर फ़ायरिंग की घटना के विरोध में विभिन्न जनसंगठनों के कार्यकर्ताओं ने दिल्ली के उत्तर प्रदेश भवन पर धरना दिया और मुख्यमन्त्री के नाम ज्ञापन देकर दोषियों के विरुद्ध कार्रवाई की माँग की।

धरनास्थल पर प्रदर्शनकारियों को सम्बोधित करते हुए वक्ताओं ने कहा कि उत्तर प्रदेश की मायावती सरकार के घोर निरंकुश एवं मज़दूर विरोधी रवैये के कारण प्रशासन और पुलिस के अधिकारी बेख़ौफ़ होकर मज़दूरों के दमन-उत्पीड़न में भागीदार बन रहे हैं। वक्ताओं ने कहा कि इस घटना में गोरखपुर ज़िला प्रशासन तथा पुलिस की भूमिका अत्यन्त निन्दनीय है तथा मिलमालिकों के साथ प्रशासनिक अधिकारियों की साँठगाँठ की ओर इशारा करती है। घटना के दो दिन बीत जाने के बाद भी मिलमालिक और अपराधियों के सरगना को गिरफ़्तार नहीं किया गया है। उल्टे मज़दूर नेताओं को फ़र्ज़ी मामले में फँसाने तथा मज़दूरों के न्यायसंगत एवं विधिसम्मत आन्दोलन को "आतंकवादी" सिद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है।

ज्ञापन में माँग की गयी है कि मज़दूरों पर फ़ायरिंग कराने वाले मिलमालिक तथा अपराधी सरगना प्रदीप सिंह एवं उसके गुण्डों को तत्काल गिरफ़्तार कर हत्या के प्रयास का मुक़दमा चलाया जाये, अपराधियों को बचाने वाले अधिकारियों के विरुद्ध कठोर कार्रवाई की जाये, घटना की न्यायिक जाँच करायी जाये, फ़ायरिंग के कारण अपंग हुए मज़दूरों के इलाज की पूरी व्यवस्था की जाये और उन्हें 10-10 लाख रुपये मुआवज़ा घोषित किया जाये, मज़दूरों पर लगाये गये सभी फ़र्ज़ी मुक़दमे वापस लिये जायें तथा अंकुर उद्योग लिमिटेड के 18 मज़दूरों का निलम्बन वापस लेकर कारख़ाने को अविलम्ब चालू कराया जाये।

वक्ताओं ने कहा कि यदि प्रदेश सरकार इन माँगों पर कार्रवाई नहीं करती है तो प्रदेश व्यापी जन-असहयोग आन्दोलन और लम्बे मज़दूर सत्याग्रह की शुरुआत की जायेगी। धरने में करावलनगर मज़दूर यूनियन के आशीष एवं नवीन कुमार, दिल्ली मेट्रो कामगार यूनियन के अजय स्वामी, दिशा छात्र संगठन के अभिनव सिन्हा, राहुल फ़ाउण्डेशन के सत्यम, स्त्री मज़दूर संगठन की कविता, सुवी एवं श्रुति, स्त्री मुक्ति लीग की शिवानी, बिगुल मज़दूर दस्ता के रूपेश कुमार, जागरूक नागरिक मंच, रोहिणी की मीनाक्षी, सन्दीप शर्मा एवं जयपुष्प, नौजवान भारत सभा के योगेश स्वामी, जनचेतना मंच, गोहाना की डा. शान्ति शर्मा एवं नरेश विरोधिया, 'पहल' से जुड़ी स्मृति, नन्दिता एवं नेहा, फ़िल्मकार चारुचन्द्र पाठक, संगीतकार सौरभ बनर्जी सहित अनेक संगठनों के कार्यकर्ता बड़ी संख्या में शामिल हुए।

गोरखपुर के मज़दूरों के समर्थन में कोलकाता में सैकड़ों मज़दूरों का प्रदर्शन

कोलकाता। गोरखपुर के अंकुर उद्योग एवं वी.एन. डायर्स कारख़ानों के मज़दूरों पर प्रबन्धन द्वारा भाड़े के गुण्डों एवं पुलिस-प्रशासन की मिलीभगत से लगातार किये जाने वाले बर्बर हमलों के विरोध में पश्चिम बंगाल के औद्योगिक मज़दूरों ने भी आवाज़ उठायी। अंकुर उद्योग एवं वी.एन. डायर्स की घटनाओं के बारे में मज़दूरों को अवगत कराने के लिये श्रमिक संग्राम समिति की ओर से बड़े पैमाने पर पोस्टर और पर्चे तैयार किये गये जिनमें इन दो कम्पनियों के संघर्षरत मज़दूरों पर होने वाले हमलों के विरोध में अपनी आवाज़ उठाने का आह्वान किया गया।

27 मई 2011 को श्रमिक संग्राम समिति के बैनर तले कलकत्ता इलेक्ट्रिक सप्लाई कारपोरेशन, हिन्दुस्तान इंजीनियरिंग एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लि. (तिलजला प्लाण्ट), भारत बैटरी, कलकत्ता जूट मिल, सूरा जूट मिल, अमेरिकन रेफ़्रिजरेटर कम्पनी सहित विभिन्न कारख़ानों के तक़रीबन 500 मज़दूरों ने कोलकाता के प्रशासनिक केन्द्र एस्प्लेनेड में विरोध सभा आयोजित की। सभा को सम्बोधित करने वाले अधिकतर वक्ता मज़दूर थे जो अपने-अपने कारख़ानों में संघर्षों का नेतृत्व कर रहे हैं। वक्ताओं ने प्रबन्धन, गुण्डों, पुलिस-प्रशासन एवं दलितों की मसीहा कही जाने वाली मायावती के नेतृत्व वाली उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा मज़दूरों पर किये गये बर्बर कृत्यों की कठोर शब्दों में निन्दा की और उनके ख़िलाफ़ मज़दूरों के प्रतिरोध को अपना समर्थन जताया।

सभा में वक्ताओं ने निम्न बिन्दुओं पर बात की –

1. भूमण्डलीकरण और उदारीकरण के इस दौर में पूँजीपति वर्ग ने भारत के मज़दूर वर्ग के ख़िलाफ़ खुली जंग छेड़ दी है और मौजूदा श्रम क़ानूनों के उल्लंघन एवं मज़दूरों के हक़ो-हुक़ूक में कटौती करने की खुली छूट दे दी है।

2. कांग्रेस, भाजपा, माकपा, तृणमूल कांग्रेस, बसपा सहित सभी चुनावी पार्टियाँ अपनी सरकारों (जहाँ कहीं वह सरकार में हैं) और ट्रेड यूनियनों द्वारा पूँजीपति वर्ग को ये हमले करने में मदद कर रही हैं क्योंकि वस्तुत: ये सभी भूमण्डलीकरण की नीतियों के पक्ष में हैं।

3. ऐसे में जहाँ कहीं भी मज़दूर पूँजीपतियों के हमलों के ख़िलाफ़ संघर्ष का रास्ता चुनते हैं उन्हें अपने अनुभव से इस बात का एहसास हो जाता है कि भूमण्डलीकरण की नीतियों के हमलों का जवाब देने के लिए उनके पास परम्परागत पार्टियों और उनके द्वारा नियन्त्रित ट्रेड यूनियनों से विच्छेद करने के अलावा कोई रास्ता नहीं है। संघर्ष को एक नये सिरे से संगठित करने के लिए यह विच्छेद केवल सांगठनिक स्तर पर नहीं बल्कि संघर्ष के तौर-तरीक़े एवं वैचारिक प्रक्रिया के स्तर पर भी ज़रूरी है।

4. इन नेतृत्वकारी मज़दूरों ने अपने भाषण में इस बात पर ज़ोर दिया कि संघर्ष को छेड़ने के लिए मात्र नये संगठन बनाना ही काफ़ी नहीं है बल्कि इन नये संगठनों पर पूँजीपति वर्ग का क़ब्ज़ा फिर से न होने पाये इसके लिए इन संगठनों पर संघर्षरत मज़दूरों का पूरा नियन्त्रण होना एक पूर्वशर्त है।

5. वक्ताओं ने कहा कि पिछले कुछ वर्षों से ये अभिलाक्षणिकताएँ मज़दूर वर्ग के आन्दोलन में एक नयी परिघटना के रूप में सामने आयी हैं जैसा कि देशभर में कारख़ाना आधारित संघर्षों में देखने में आया है। वक्ताओं का कहना था कि गोरखपुर में जो कुछ भी हो रहा है वह इसी परिघटना की अभिव्यक्ति है। हालाँकि यह परिघटना अभी अपने भ्रूण रूप में है, लेकिन शासक वर्ग इसे इसी चरण में ही कुचल देना चाहता है, गोरखपुर के संघर्षरत मज़दूरों पर हमले इसीलिए हो रहे हैं।

इन हालात में इस विरोध सभा के वक्ताओं ने इन संघर्षों के नेतृत्वकारी मज़दूरों का देश के स्तर पर एक मंच बनाने की आवश्यकता पर बल दिया जिससे कि वे ख़ुद ही इन संघर्षों के दौरान पैदा होने वाली समस्याओं से निपट सकें और संयुक्त कार्रवाइयों द्वारा शासक वर्ग के हमलों का जवाब दे सकें और वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाने की दिशा में कदम बढ़ायें।

सभा को सम्बोधित करने वालों में कोलकाता से प्रकाशित होने वाले अख़बार 'श्रमिक इश्तेहार' के कार्यकारी सम्पादक तुषार भट्टाचार्य एवं गाजियाबाद से प्रकाशित होने वाले पाक्षिक 'हमारी सोच' के सम्पादक शुभाशीष डी शर्मा भी थे।

इस सभा के दौरान एक तीन सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल पश्चिम बंगाल के राज्यपाल एम.के. नारायणन से मिला और अंकुर उद्योग एवं वी. एन. डायर्स के मज़दूरों के संघर्ष के समर्थन में उन्हें एक ज्ञापन दिया।

– मानब विश्वास

मज़दूर आन्दोलन के दमन और गोरखपुर में श्रम क़ानूनों की स्थिति की जाँच के लिए दिल्ली से गयी तथ्यसंग्रह टीम की रिपोर्ट

दिल्ली से गये मीडियाकर्मियों के एक जाँच दल ने 19 से 21 मई तक गोरखपुर का दौरा करके और विभिन्न पक्षों से बात करने के बाद नई दिल्ली में अपनी जाँच रिपोर्ट जारी की। इस दल में हिन्दुस्तान के वरिष्ठ उपसम्पादक नागार्जुन सिंह, फ़िल्मकार चारु चन्द्र पाठक और कोलकाता के पत्रकार एवं सामाजिक कार्यकर्ता सौरभ बनर्जी शामिल थे। तीन दिनों के दौरान जाँच दल ने विभिन्न प्रशासनिक अधिकारियों, श्रम विभाग, स्थानीय सामाजिक संगठनों, राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों, श्रम संगठनों, मीडियाकर्मियों, श्रमिकों, श्रमिक नेताओं और प्रबुद्ध नागरिकों से मुलाक़ात करके इस पूरे घटनाक्रम की विस्तृत जाँच की।

जाँच दल की रिपोर्ट के अनुसार फ़ायरिंग की घटना का तात्कालिक कारण यह था कि कई कारख़ानों के क़रीब 1500 मज़दूर 1 मई को आयोजित मज़दूर माँगपत्रक आन्दोलन की रैली में शामिल होने के लिए दिल्ली चले गये थे जबकि कारख़ाना मालिकान इसका विरोध कर रहे थे। दिल्ली से लौटने पर 18 चुनिन्दा श्रमिकों को निलम्बित कर दिया गया। 3 मई को हथियारबन्द लोग जब श्रमिक नेता प्रशान्त को ज़बरदस्ती फ़ैक्टरी के अन्दर ले जाने का प्रयास कर रहे थे तब श्रमिक आक्रोशित हुए और इसके विरोध तथा अपने बचाव में उन्होंने पथराव किया। इसके बाद फ़ैक्टरी के अन्दर से हुई फ़ायरिंग में 19 मज़दूर और एक छात्रा घायल हो गये।

जाँच टीम इस निष्कर्ष पर पहुँची कि 3 मई को हुई फ़ायरिंग एक अलग-थलग घटना नहीं बल्कि गोरखपुर में दो वर्ष से मालिकों और मज़दूरों के बीच में चल रहे टकराव की ही परिणति है। पिछले लगभग दो वर्ष से मज़दूर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते आ रहे हैं जो अब संगठित रूप ले चुका है। यह फ़ैक्टरी प्रबन्धन के लिए चिन्ता का सबब बन चुका है। श्रमिकों के प्रति प्रशासनिक दृष्टिकोण भी सहयोगात्मक नहीं है। जाँच में यह बात मुख्य रूप से उभरकर आयी कि श्रमिकों का पक्ष पूरी तरह नहीं सुना जा रहा है और प्रशासनिक स्तर पर उपेक्षा और बल प्रयोग से बात और बिगड़ रही है।

जाँच टीम ने अपनी रिपोर्ट में उत्तर प्रदेश शासन से माँग की है कि अंकुर उद्योग लिमिटेड में हुई फ़ायरिंग की उच्च स्तरीय जाँच करायी जानी चाहिए। टीम कमिश्नर द्वारा मजिस्ट्रेट जाँच के आदेश को असंगत मानती है क्योंकि पूरे प्रकरण में प्रशासनिक भूमिका सन्देह के दायरे में है। टीम की अन्य संस्तुतियों में फ़ायरिंग के दोषी व्यक्तियों की गिरफ़्तारी, श्रमिकों तथा उनके नेतृत्व से सौहार्दपूर्ण माहौल में वार्ता करके उनकी समस्याओं का समाधान करना, गोरखपुर औद्योगिक क्षेत्र की फ़ैक्टरियों में श्रम क़ानूनों की वास्तविक तस्वीर सामने लाना और इनमें श्रम क़ानूनों के अनुपालन को सुनिश्चित कराना, पुलिस की भूमिका की जाँच कराना और गोलीकाण्ड में घायल लोगों को सरकार द्वारा उचित मुआवज़ा दिया जाना शामिल है।

पूरी रिपोर्ट इस वेबसाइट पर देखी जा सकती है :

http://workersresist.net

गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन के पक्ष में अभियान का समर्थन देने वाले कुछ प्रमुख व्यक्तियों के सन्देश। हमें फोन, एसएमएस, ईमेल आदि से और भी बहुत से सन्देश मिले लेकिन आन्दोलन की आपाधापी में उन सबको सहेजना मुश्किल था। – गोरखपुर मज़दूर आन्दोलन समर्थक नागरिक मोर्चा

शाबाश!!! यह एकता की जीत है। "एकता से सफलता हासिल होती है, विभाजन से असफलता।" शुभकामनाएँ।

– पास्कल तिर्की,
सामाजिक कार्यकर्ता, दिल्ली

मुबारक हो!

– कामायनी बाली-महाबल,
वकील, मुम्बई

मज़दूरों को इस सफल संघर्ष के लिए बधाइयाँ!

– आनन्द पटवर्धन,
फ़िल्मकार, मुम्बई

धन्यवाद और सभी को बधाई!

– जया विन्ध्याला,
अध्यक्ष पीयूसीएल, आन्ध्र प्रदेश

शुभकामनाएँ। ज़िन्दाबाद!

– यू रॉय

लाल सलाम!

– गौतम नवलखा, पीयूडीआर

ज़िन्दाबाद! मुबारक हो!

– इन्दु प्रकाश सिंह, दिल्ली

मुझे यह सुनकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। आपके द्वारा भेजी गयी अपील को मैंने कई स्थानीय कार्यकर्ताओं को प्रेषित किया और मैंने स्वयं अधिकारियों को तीन बार फ़ोन किया और उन्हें अपना विरोध जताया। मज़दूरों को विजय की शुभकामनाएँ!

– कावेरी राजारमन इन्दिरा,
बंगलोर

यह वाक़ई बहुत बड़ी जीत है। आज तक आन्तरिक जाँच को मालिक का सर्वाधिकार माना जाता रहा है। मज़दूरों ने लड़कर यह हक़ हासिल किया है कि जाँच में स्टाफ़ और मज़दूरों के प्रतिनिधि होंगे। यह मज़दूर संघर्षों के इतिहास में नया मील का पत्थर है। इसका प्रचार किया जाना चाहिए और इसे सिद्धान्त के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए कि हर आन्तरिक जाँच में इसी तरह के जाँचकर्ता हों।

– दिनेश राय द्विवेदी,
वकील (कोटा, राजस्थान)

मज़दूर संघर्षों के लिए एक बड़ी उपलब्धि। कृपया संघर्ष जारी रखें।

– एस. आर. दारापुरी
(आई.पी.एस. सेवानिवृत्त)

सभी साथियों को जीत मुबारक़ हो।

– रोमा,
एनईएफपीएफडब्ल्यू
(कैमूर)/ह्यूमन राइट्स लॉ
सेण्टर), सोनभद्र

मुबारक़ हो!

– फ़ैज़ा अहमद ख़ान,
फ़िल्मकार, मुम्बई

बहुत अच्छे – बधाई!! शुभकामनाएँ!

– विवेक सुन्दरा,
मुम्बई

मज़दूरों की जीत की बधाई और मज़दूर आन्दोलन का समर्थन करने के लिए नागरिक मोर्चा का हार्दिक अभिनन्दन!

– रजनी कान्त मुद्गल,
एसएडीईडी

यह उत्तर प्रदेश और भारत के मज़दूर आन्दोलन के लिए वाक़ई एक बड़ी उपलब्धि है। हम आन्दोलन और इसके सामूहिक संकल्प को सलाम करते हैं। मिल मालिक के भाड़े के गुण्डों के हमला करने और मज़दूरों के घायल होने के पन्द्रह दिन के भीतर हासिल हुई यह जीत वास्तव में पूरे देश में मज़दूर आन्दोलनों की शक्ति और गर्व को पुनःस्थापित करती है।

समर्थन में,

– विजयन एमजे
(दिल्ली फ़ोरम)

आप सभी को लाल सलाम।

– ज़ेवियर डायस, संपादक -
खान, खनिज और अधिकार, रांची

ख़ुशख़बरी! धन्यवाद।

– गौहर रज़ा,
फ़िल्मकार, दिल्ली

मुम्बई में गोलीबार बस्ती उजाड़ने के विरुद्ध चले आन्दोलन की एक नेता **प्रेरणा गायकवाड़** ने गोरखपुर के मज़दूरों के नाम रिकार्ड कर भेजे गये सन्देश में कहा, "हम अपनी लड़ाई जीत गये हैं लेकिन आपको अब अपनी लड़ाई जारी रखनी होगी। आप अपनी लड़ाई जारी रखें। हम आपके साथ हैं।"

गोलीबार की गणेश कृपा सोसायटी के देवान और फैजा ने कहा, "गणेश कृपा सोसायटी के निवासी कठोर शब्दों में भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा गोरखपुर के मज़दूर आन्दोलन के दमन की निन्दा करते हैं। आप अपनी लड़ाई जारी रखें, जीत आपकी ही होगी।"

हम गोरखपुर के आन्दोलनरत मज़दूरों के साथ हैं!

– सुभाष गौतम,
स्वतन्त्र पत्रकार, दिल्ली

रैडिकल विमेन, ऑस्ट्रेलिया ने गोरखपुर के मज़दूरों का हार्दिक समर्थन करते हुए उ.प्र. के राज्यपाल श्री बी.एल. जोशी और अन्य अधिकारियों को ज्ञापन भेजकर मज़दूरों का दमन बन्द करने और उनकी माँगों पर तुरन्त कार्रवाई करने की माँग की।

– डेब्बी ब्रेनन,
रैडिकल विमेन, ऑस्ट्रेलिया

"शोषकों के ख़िलाफ़ संघर्ष में मज़दूर वर्ग फौलादी ताक़त बटोरता जाता है और एक दिन उसका सुपरिणाम हमें दिखायी देगा। न्याय की बहाली जल्दी ही होगी और पूँजीवादी क़र्ज़ चुकता हो जायेगा।"

- अमेरिका के एक मज़दूर
कार्यकर्ता फ्रैंकेंस्टाइन

प्रवासी मज़दूरों की दुरवस्था और उनकी माँगें मज़दूर आन्दोलन के एजेण्डा पर अहम स्थान रखती हैं

(पेज 20 से आगे)

मज़दूर एकता के धागे हैं, जिनका ताना-बाना फैलकर देश की सीमाओं के पार तक जाता है और अन्य देशों के मज़दूरों के साथ भी भारतीय मज़दूरों की एकजुटता की एक नयी ज़मीन तैयार कर सकता है।

प्रवासी मज़दूर के लिए ज़ाहिरा तौर पर पहली माँग यही हो सकती है कि उनके लिए एक विशेष पहचान कार्ड की व्यवस्था की जाये ताकि देश में कहीं भी जाकर काम पाने में, अन्य बुनियादी नागरिक सुविधाएँ पाने में, बी.पी.एल. कार्ड बनवाने में, स्वास्थ्य सेवा कार्ड (जिसकी सार्विक व्यवस्था संघर्ष का एक अलग मुद्दा है) आदि हासिल करने में उन्हें परेशानी का सामना न करना पड़े। इस काम के लिए, यानी प्रवासी मज़दूरों का पंजीकरण करके कार्ड जारी करने, उनके (व उनके परिवार के लिए) आवास की व्यवस्था करने में मदद करने के लिए था, उनके अस्थायी आवास के निर्माण एवं प्रबन्धन के लिए, पूरे देश में, निचले स्तर तक, श्रम विभाग में 'प्रवासी मज़दूर ब्यूरो' बनाये जाने चाहिए। इस सम्बन्ध में मज़दूरों के नियोक्ताओं की ज़िम्मेदारी भी तय की जानी चाहिए और उपरोक्त मदों में खर्च के लिए एक हिस्से की ज़िम्मेदारी (सरकार के अतिरिक्त) भी उनकी होनी चाहिए। प्रवासी मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी मिले, उनके सन्दर्भ में श्रम क़ानूनों का अनुपालन सुनिश्चित हो, उन्हें साफ़ पानी, जल निकासी, साफ़-सफ़ाई युक्त आवास जैसी बुनियादी सुविधाएँ अनिवार्यतः मिलें, इसके लिए श्रम विभाग और नियोक्ताओं की स्पष्ट जवाबदेही तय होनी चाहिए तथा अनुपालन न होने की स्थिति में कठोर दण्ड का प्रावधान होना चाहिए। जो प्रवासी मज़दूर पूँजीवादी विकास वाले दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर कृषि व कृषि आधारित या सम्बद्ध उद्यमों में काम करते हैं, उनके लिए भी यह माँग समान रूप से लागू होती है। साथ ही, सीज़नल मज़दूरों के इन अधिकारों की भी हिफ़ाज़त होनी चाहिए। प्रवासी सीज़नल मज़दूरों को सीज़न में यात्रा के दौरान ट्रेनों की कमी के कारण भयंकर दिक्क़तों का सामना करना पड़ता है। केन्द्र और राज्य के श्रम विभागों को रेलवे विभाग के साथ तालमेल करके प्रवासी सीज़नल मज़दूरों के लिए विशेष ट्रेनों की व्यवस्था करवानी चाहिए।

अन्तरराज्यीय प्रवासी मज़दूर क़ानून में व्यापक परिवर्तन की माँग को मुद्दा बनाना होगा। फ़िलहाल यह सिर्फ़ काण्ट्रैक्टर के ज़रिये काम पर ले जाये जाने वाले मज़दूरों पर ही लागू होता है। इसके दायरे को बढ़ाकर, इसे व्यक्तिगत तौर पर प्रवासी होने वाली बहुसंख्यक प्रवासी मज़दूर आबादी पर भी लागू किया जाना चाहिए, इसके प्रावधानों में उपरोक्त सभी माँगें शामिल की जानी चाहिए तथा इसके अमल की अनिवार्य ज़िम्मेदारी गृह राज्य और मेज़बान राज्य – दोनों ही के श्रम विभागों पर अनिवार्यतः डाली जानी चाहिए। फ़िलहाल यह क़ानून सिर्फ़ उन स्थानों पर लागू होता है जहाँ 6 या उससे अधिक प्रवासी मज़दूर काम करते हैं। इसमें संशोधन करके इस क़ानून को हर उस जगह पर लागू किया जाना चाहिए जहाँ एक भी प्रवासी मज़दूर काम करता है। फ़िलहाल इस क़ानून के तहत, काण्ट्रैक्टर द्वारा मज़दूरों को मज़दूरी के अतिरिक्त स्थानान्तरण भत्ता, यात्रा भत्ता, स्थिति अनुसार आवास, कपड़े, चिकित्सा-सुविधाएँ आदि देने के जो भी प्रावधान हैं वे कहीं भी लागू नहीं होते। अतः ज़रूरी है कि इस क़ानून में व्यापक सुधार के साथ ही इसका अमल सुनिश्चित करने की व्यवस्था की भी पुरज़ोर माँग उठायी जाये।

समूची दुनिया के मेहनतकश एक हैं। मज़दूर आन्दोलन में इस भावना को मज़बूती से जमाना होगा। दूसरे देशों से भारत आकर काम करने वाले मज़दूर भाइयों को भारतीय श्रम क़ानून प्रदत्त सभी अधिकार हासिल कराने के लिए विशेष क़ानून बनाया जाये, उनके पंजीकरण और वर्क परमिट आदि की प्रक्रिया सरल बनायी जाये तथा उनके सभी क़ानूनी अधिकारों पर अमल सुनिश्चित कराने के लिए श्रम विभाग में अलग प्रकोष्ठ बनाया जाये, यह माँग भारत के समूचे मज़दूर वर्ग को अपनी माँग के तौर पर उठानी होगी। यह सच्ची अन्तरराष्ट्रीयतावादी भावना होगी जो मज़दूर आन्दोलन की आत्मा है। किसी भी प्रकार की अन्धराष्ट्रवादी दुर्भावना या विद्वेष मज़दूर आन्दोलन के लिए घातक होता है। और फिर आज तो पूँजी की वैश्विक एकता के ख़िलाफ़ श्रम की वैश्विक एकता और अधिक ज़रूरी, बल्कि अनिवार्य हो गयी है। मज़दूरों को नयी तैयारी का पहला क़दम उठाते समय से ही इस बात पर विशेष ध्यान देना होगा।

साम्राज्यवादियों से मज़दूर वर्ग को यह सवाल उठाना होगा कि भूमण्डलीकरण का झण्डा लहराते हुए जब वे पूँजी के स्वतन्त्र विश्वव्यापी आवाजाही के रास्ते की सारी बन्दिशें हटाते जा रहे हैं तो यही बात श्रम की विश्वव्यापी आवाजाही पर क्यों नहीं लागू करते? अमेरिका और पश्चिमी देशों की पूँजी यदि निर्बाध रूप से भारत जैसे सभी पिछड़े पूँजीवादी देशों में जा सकती है तो ऐसे सभी पिछड़े देशों के मज़दूरों को भी दुनिया के विकसित देशों में जाकर मज़दूरी करने की उतनी ही आज़ादी क्यों नहीं दी जाती? भारत सरकार यदि इस माँग को पुरज़ोर तरीक़े से नहीं उठाती तो इसलिए कि वह साम्राज्यवादियों के 'जूनियर पार्टनरों' (भारतीय पूँजीपतियों) की 'मैनेजिंग कमेटी' से अधिक कुछ भी नहीं है। साथ ही, अंशतः भी ऐसा होने से विश्व पूँजीवादी तन्त्र में जो संकट पैदा होगा उससे भारतीय पूँजीवाद भी अछूता नहीं रह पायेगा। भारत के मज़दूर आन्दोलन को भूमण्डलीकरण के तर्क की असलियत उजागर करने और पूँजीवादी व्यवस्था पर दबाव बनाने के लिए यह माँग दमदार तरीक़े से उठानी चाहिए।

भारत के मज़दूर आन्दोलन को बाहर के देशों में जाकर काम करने वाले मज़दूरों के हितों के लिए भी संगठित, पुरज़ोर आवाज़ उठानी चाहिए। उसे भारत सरकार पर दबाव बनाना चाहिए कि वह अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर आवाज़ उठाकर तथा सम्बन्धित देशों की सरकारों से तालमेल करके प्रवासी भारतीय मज़दूरों की बेहतर मज़दूरी, बेहतर जीवन-स्थिति तथा उनके सन्दर्भ में समान श्रम क़ानूनों का अनुपालन सुनिश्चित करे और उनके विरुद्ध किसी भी प्रकार की नस्ली या अन्धराष्ट्रवादी हिंसा पर रोक के लिए कठोर कार्रवाई का दबाव बनाये। बाहर जाने वाले मज़दूरों के साथ भर्ती एजेण्टों द्वारा की जाने वाली मनमानी और धोखाधड़ी पर भी कठोर क़ानून बनाकर रोक लगाने की माँग एक अहम माँग है।

कुछ क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियाँ (जैसे शिवसेना, मनसे आदि) अपनी चुनावी गोट लाल करने के लिए अक्सर अन्य राज्यों से आये लोगों के खिलाफ़ हिंसा भड़काती रहती हैं जिसका सर्वाधिक शिकार प्रवासी मज़दूर होते हैं। इस देश का बुर्जुआ जनवादी संविधान भी किसी नागरिक को देश में कहीं भी जाकर काम करने और जीने का अधिकार देता है। फिर यदि इस बुनियादी नागरिक अधिकार का हनन करने वाली पार्टियों को असंवैधानिक बनाकर प्रतिबन्धित नहीं किया जाता तो इसे बुर्जुआओं के आपसी भाईचारे के अतिरिक्त भला और क्या कहा जायेगा! ऐसी अर्द्धफ़ासिस्ट-फ़ासिस्ट क़िस्म की राजनीतिक पार्टियों के विरुद्ध प्रतिबन्ध की माँग के साथ ही इनके ख़िलाफ़ व्यापक मेहनतकश आबादी की लामबन्दी की कोशिशें भी करनी होंगी।

कैसा है यह लोकतन्त्र और यह संविधान किनकी सेवा करता है? (दसवीं किस्त)

आलोक रंजन

इस धारावाहिक लेख की चौथी किस्त 'नयी समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल' अख़बार के अन्तिम अंक (जून, 2010) में प्रकाशित हुई थी। उसी अख़बार के उत्तराधिकारी के रूप में नवम्बर 2010 में जब 'मज़दूर बिगुल' का प्रकाशन शुरू हुआ तो प्रवेशांक में कुछ अपरिहार्य कारणों से इस लेख की अगली किस्त नहीं दी जा सकी। दिसम्बर 2010 अंक से पुनः इस धारावाहिक लेख का प्रकाशन शुरू किया गया है। – सम्पादक

संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित सम्प्रभुता की असलियत

सम्प्रभुता की आधुनिक अवधारणा को विकसित करने में हॉब्स और रूसो जैसे प्रबोधनकालीन दार्शनिकों से लेकर अमेरिकी क्रान्ति और फ़्रांसीसी क्रान्ति के सिद्धान्तकारों तक की अहम भूमिका थी। यह ईश्वरीय स्वीकृति प्राप्त राजा की सम्प्रभु सत्ता की जगह जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की सत्ता के माध्यम से जनता को सम्प्रभु बनाने की, यानी स्वतन्त्र निर्णय लेने की सम्पूर्ण क्षमता से लैस बनाने की, क्रान्तिकारी अवधारणा थी। आन्तरिक सन्दर्भों में सम्प्रभुता का अर्थ यह था कि जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा नीति-निर्माण और क्रियान्वयन-सम्बन्धी निर्णय लेने की सम्पूर्ण स्वतन्त्रता थी, वहीं बाह्य सन्दर्भों में इसका अर्थ राज्यसत्ता का किसी भी अन्य देश के हस्तक्षेप या दबाव से मुक्त होना था।

जहाँ तक जनता को सम्प्रभु बनाने का प्रश्न है, विश्व इतिहास में, बुर्जुआ जनवादी क्रान्तियों ने भी कहीं जनता को सम्प्रभु नहीं बनाया। हर प्रकार के बुर्जुआ जनवादी गणराज्य में जनता के मताधिकार के बावजूद (हालाँकि कई देशों में स्त्रियों को मताधिकार काफ़ी बाद में मिला) वास्तव में सत्ता बुर्जुआ वर्ग के ही हाथों में केन्द्रित रही। पूँजीवाद के ऐतिहासिक युग में सम्प्रभुता का अर्थ पूँजीपति वर्ग की राज्यसत्ता की, आन्तरिक और बाह्य सन्दर्भों में, निर्णय लेने की स्वतन्त्रता थी। जो उपनिवेशवादी देश थे, उनकी बुर्जुआ सत्ताएँ सम्प्रभु थीं। दूसरी ओर उपनिवेश, अर्द्धउपनिवेश और नाममात्र की स्वतन्त्रता वाले वित्तीय उपनिवेश थे, जहाँ सत्ताओं की सम्प्रभुता सम्भव ही नहीं थी। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद के तीन दशकों के दौरान एशिया, अफ़्रीका, लातिन अमेरिका के अधिकांश उपनिवेशों-अर्द्धउपनिवेशों ने राजनीतिक स्वतन्त्रता हासिल कर ली। कुछ देश अमेरिकी नवउपनिवेश बन गये, पर यह स्थिति भी ज़्यादा दिनों तक बनी नहीं रही। अब समय 'बिना उपनिवेशों के साम्राज्यवाद' का था जहाँ उत्पादक शक्तियों के विकास में अन्तर के हिसाब से, उन्नत पूँजीवादी देश पिछड़े पूँजीवादी देशों की जनता का शोषण करते थे। किसी भी नवस्वाधीन देश की बुर्जुआ सत्ता पूर्णतः सम्प्रभु नहीं थी। उनकी सम्प्रभुता खण्डित थी, अलग-अलग अंशों में सीमित थी। जिन देशों के बुर्जुआ वर्गों ने परिस्थितियों का लाभ उठाकर और समझौते करके सत्ता प्राप्त की थी, उनकी सम्प्रभुता अधिक सीमित थी। जिन देशों के बुर्जुआ वर्गों ने जुझारू जनसंघर्ष या राष्ट्रीय जनवादी क्रान्तियों के ज़रिये सत्ता हासिल की थी, उनकी सम्प्रभुता सापेक्षतः अधिक थी। लेकिन पूँजीवादी विकास के रास्ते पर आगे बढ़ने के साथ ही इन देशों का बुर्जुआ वर्ग भी साम्राज्यवाद से समझौते के लिए विवश होता चला गया। कालान्तर में तीसरी दुनिया के सभी देशों के बुर्जुआ विश्व पूँजीवादी तन्त्र में अपनी-अपनी ताक़त के हिसाब से अलग-अलग सोपानों पर साम्राज्यवाद के कनिष्ठ साझीदार के रूप में व्यवस्थित हो गये।

प्रबोधनकालीन आदर्शों के मानदण्डों पर खरी उतरने वाली 'राष्ट्र की सम्प्रभुता' यदि कहीं 'जनता की सम्प्रभुता' के पर्याय के रूप में स्थापित हो सकी तो उन देशों में, जहाँ सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में हुई समाजवादी क्रान्ति (1917 की सोवियत क्रान्ति) या लोक जनवादी क्रान्तियों (चीन, कोरिया, वियतनाम आदि) ने साम्राज्यवादी विश्व से निर्णायक विच्छेद किया था।

अब हम भारत की विशेष स्थिति की ओर लौटते हैं। भारतीय बुर्जुआ वर्ग ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक राष्ट्रीय जनान्दोलन का नेतृत्व करते हुए, 'समझौता-दबाव-समझौता' की रणनीति अपनाते हुए और विश्व परिस्थितियों का सटीक ढंग से लाभ उठाते हुए सत्ता हासिल की थी। सत्ता-हस्तान्तरण के संक्रमणकालीन दौर की जिन परिस्थितियों की पहले चर्चा की जा चुकी है, उससे स्पष्ट है कि भारतीय बुर्जुआ वर्ग की सत्ता की सम्प्रभुता प्रारम्भ से ही खण्डित और सीमित-संकुचित थी। राजनीतिक स्वतन्त्रता के बावजूद, भारत के शासक वर्ग ने साम्राज्यवादी विश्व से निर्णायक विच्छेद नहीं किया। कई साम्राज्यवादी देशों की प्रतिस्पर्धा का लाभ उठाते हुए, साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी की मदद लेते हुए और उसे शोषण का अवसर देते हुए उसने क्रमिक पूँजीवादी विकास का रास्ता चुना। केवल साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी की मदद से पूँजीवादी विकास का रास्ता किसी एक साम्राज्यवादी देश के नवउपनिवेश जैसी स्थिति पैदा कर सकता था या साम्राज्यवादी दबाव बहुत अधिक बढ़ा सकता था। इससे बचने के लिए अन्तर साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा और साम्राज्यवादी तथा समाजवादी शिविरों के बीच के टकराव का लाभ उठाने के साथ-साथ भारतीय बुर्जुआ वर्ग ने पूँजी संचय की समस्या को हल करने के लिए राजकीय पूँजीवाद (पब्लिक सेक्टर) का रास्ता चुना और आम जनता को निचोड़कर आधारभूत एवं ढाँचागत उद्योगों का ढाँचा खड़ा किया। इस तरह साम्राज्यवादी विश्व में, अपनी आर्थिक कमजोरी के बावजूद और साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी को लाभ कमाने की छूट देते हुए भी, भारतीय बुर्जुआ वर्ग ने निर्णय और कार्रवाई करने की अपनी स्वतन्त्रता, मूलतः और मुख्यतः बनाये रखी। इन अर्थों में भारतीय बुर्जुआ सत्ता, काफ़ी हद तक (सम्पूर्णतः नहीं) सम्प्रभु थी, पर यह सम्प्रभुता जनता की सम्प्रभुता नहीं थी।

भारतीय राज्य का यही चरित्र हमें नेहरू की विदेश नीति में देखने को मिलता है। एक ओर नेहरू ने संरक्षणवादी तथा आयात-प्रतिस्थापन (इम्पोर्ट-सब्स्टीट्यूशन) की आर्थिक नीति अपनायी, दुनिया के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों का समर्थन (हालाँकि यह समर्थन मौखिक से आगे नहीं गया) किया, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के भागीदार बने बहुपक्षीय सामरिक सन्धियों से अलग रहे, लेकिन दूसरी ओर उन्होंने माउण्टबेटन को गवर्नर जनरल बनाये रखकर, ब्रिटिश कम्पनियों की पूँजी और परिसम्पत्तियों को ज़ब्त न करके और उन्हें कारोबार जारी रखने की इजाज़त देकर तथा कॉमनवेल्थ में शामिल होकर ब्रिटेन को भविष्य में अच्छे सम्बन्धों के प्रति आश्वस्त भी किया। अन्य पश्चिमी देशों की ओर भी उन्होंने दोस्ती का हाथ बढ़ाया तथा तकनोलॉजी एवं वित्त के वांछित स्रोत के तौर पर अमेरिका को देखते हुए उससे बेहतर रिश्ते बनाने की भरपूर कोशिश की। वास्तव में, यह अमेरिका था जिसने मैकार्थीवादी कम्युनिस्ट विरोधी लहर, डलेस भाइयों की विदेश नीति, सैनिक गठबन्धनों की नवउपनिवेशवादी नीति और शीतयुद्ध के प्रभाव में, नेहरू की "समाजवादी" जुमलेबाज़ियों और सापेक्षतः स्वतन्त्र आर्थिक नीति को सन्देह की निगाह से देखा तथा नेहरू के दोस्ताना रुख़ की भरपूर उपेक्षा की। इस अमेरिकी रुख़ और पश्चिमी देशों के दबाव का जवाब नेहरू ने गुटनिरपेक्ष नीति पर अपना ज़ोर बढ़ाकर तथा समाजवादी शिविर के प्रति अपनी नज़दीकियाँ बढ़ाकर दिया। सोवियत संघ अब उनके लिए तकनोलॉजी और वित्त का वैकल्पिक स्रोत था। दूसरी ओर, देश के भीतर नेहरू लगातार घोर कम्युनिस्ट विरोधी बने रहे। तेलंगाना किसान संघर्ष के बर्बर सैनिक दमन को इतिहास कभी भुला नहीं सकता। केरल में पहली कम्युनिस्ट सरकार (हालाँकि पार्टी तब तक संसदमार्गी हो चुकी थी) को निहायत स्वेच्छाचारी तरीक़े से बर्ख़ास्त करने का काम नेहरू ने ही किया था। गुटनिरपेक्ष देशों के ब्लॉक में अग्रणी भूमिका निभाकर तथा समाजवादी शिविर के साथ नज़दीकी बढ़ाकर नेहरू ने पश्चिम के साथ सौदेबाज़ी में अपनी स्थिति मज़बूत की। सोवियत संघ से प्राप्त सहायता ने तकनीकी प्रगति और सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की प्रगति के साथ ही सामरिक शक्ति बढ़ाने में भी भारत की मदद की।

लेकिन इस अवधि के दौरान भी भारतीय बुर्जुआ वर्ग अमेरिका से निकटता बढ़ाने की कोशिशें करता रहा और अमेरिका भी अपने हित साधने के हर अनुकूल अवसर का लाभ उठाने की कोशिश में लगा रहा। पड़ोसी देशों के प्रति नेहरू काल से ही भारतीय बुर्जुआ वर्ग का रुख़ विस्तारवादी और प्रभुत्ववादी रहा है। चीन के साथ सीमा विवाद भड़काने में नेहरू की भूमिका इसी रुख़ से प्रेरित थी। इस सीमा विवाद ने अमेरिका के साथ सामरिक सहकार के लिए ज़मीन तैयार की थी। साठ के दशक के मध्य में रुपये के अवमूल्यन के पीछे एक अहम कारण अमेरिकी दबाव था। तथाकथित हरित क्रान्ति ने अमेरिकी सरकारी एजेंसियों और एग्रो-कॉरपोरेशनों को भरपूर अवसर प्रदान किया कि वे भारतीय कृषि में प्रवेश कर सकें और आर्थिक नीतियों को प्रभावित कर सकें। उच्च शिक्षा की आंग्ल-अमेरिकी संस्थाओं में भारतीय कुलीन बौद्धिक तबक़ा प्रशिक्षित होता रहा। अर्थतन्त्र, तकनीकी तन्त्र और सामाजिक तन्त्र के नीति-निर्माण और प्रबन्धन में इस तबक़े की अहम भूमिका थी। कमोबेश 1980 के दशक तक भारतीय पूँजीपति वर्ग अन्तर साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा का लाभ उठाकर अपनी सीमित सम्प्रभुता को सुरक्षित बनाये रख सका। 1990 के दशक में सोवियत संघ के विघटन के बाद स्थितियाँ बदलीं। एक अधिक एकीकृत विश्व पूँजीवादी व्यवस्था अस्तित्व में आयी जिसमें वित्तीय पूँजी का चरित्र अभूतपूर्व भूमण्डलीय था और राष्ट्रीय सीमाओं के आर-पार उसकी गति निर्बाध थी। भारतीय पूँजीपति वर्ग इस नयी विश्व-व्यवस्था में पूरी तरह से शामिल हो गया। विदेशी पूँजी के लिए राष्ट्रीय बाज़ार के दरवाज़े पूरी तरह से खोल दिये गये। राजकीय उद्यमों के बेरोकटोक निजीकरण की शुरुआत हुई। पिछली आधी सदी के भीतर उत्पादक शक्तियों का विकास करके भारतीय पूँजीपति वर्ग ने जो शक्ति हासिल की है, उसके सहारे तथा साम्राज्यवादियों की प्रतिस्पर्धा का लाभ उठाकर वह आज भी अपनी सीमित सम्प्रभुता बचाये हुए है, पर साम्राज्यवादियों के कनिष्ठ साझीदार के रूप में इसका चरित्र एकदम नंगा हो चुका है और यह बात एकदम साफ़ हो चुकी है कि भारतीय राज्यसत्ता की सम्प्रभुता भारतीय जनता की सम्प्रभुता क़तई नहीं है। देशी पूँजी और विदेशी पूँजी जनता की लूट के साझीदार हैं और बुर्जुआ राज्यसत्ता साम्राज्यवादी हितों की हिफ़ाज़त के लिए वचनबद्ध है। रहे-सहे भ्रम भी अब टूट चुके हैं। दरअसल, नवउदारवाद की वर्तमान नीतियाँ उसी दिशा में यात्रा का तार्किक परिणाम हैं जो दिशा भारतीय पूँजीपति वर्ग ने सत्तारूढ़ होने के समय चुनी थी।

भारत जैसे किसी भी कृषि प्रधान पिछड़े हुए समाज में क्रान्तिकारी ढंग से भूमि-सम्बन्धों को बदले बिना व्यापक जनसमुदाय की सामूहिक पहलक़दमी और सामूहिक निर्णय की शक्ति विकसित ही नहीं की जा सकती थी और ऐसा किये बिना साम्राज्यवाद से निर्णायक विच्छेद भी सम्भव नहीं हो सकता था। चीन की लोक जनवादी क्रान्ति ने यही काम कर दिखाया था, जबकि भारत में यह सम्भव नहीं हो सका। इसके चलते भारतीय जनता न तो आन्तरिक तौर पर सम्प्रभुता-सम्पन्न हो सकी और न ही बाहरी तौर पर। संविधान में उल्लिखित सम्प्रभुता महज़ जुमलेबाज़ी ही बनकर रह गयी।

(अगले अंक में : संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित "लोकतन्त्रात्मक गणराज्य" और "समाजवाद" के ढोल की पोल)

कार्ल मार्क्स के जन्मदिवस (5 मई) के अवसर पर

मार्क्स की समाधि पर भाषण

फ्रेडरिक एंगेल्स

14 मार्च को तीसरे पहर, पौने तीन बजे, संसार के सबसे महान विचारक की चिन्तन-क्रिया बन्द हो गयी। उन्हें मुश्किल से दो मिनट के लिए अकेला छोड़ा गया होगा, लेकिन जब हम लोग लौटकर आये, हमने देखा कि वह आरामकुर्सी पर शान्ति से सो गये हैं – परन्तु सदा के लिए।

इस मनुष्य की मृत्यु से यूरोप और अमेरिका के जुझारू सर्वहारा वर्ग की और ऐतिहासिक विज्ञान की अपार क्षति हुई है। इस ओजस्वी आत्मा के महाप्रयाण से जो अभाव पैदा हो गया है, लोग शीघ्र ही उसे अनुभव करेंगे।

जैसेकि जैव प्रकृति में डार्विन ने विकास के नियम का पता लगाया था, वैसे ही मानव इतिहास में मार्क्स ने विकास के नियम का पता लगाया था। उन्होंने इस सीधी-सादी सच्चाई का पता लगाया जो अब तक विचारधारा की अतिवृद्धि से ढकी हुई थी – कि राजनीति, विज्ञान, कला, धर्म, आदि में लगने के पूर्व मनुष्य जाति को खाना-पीना, पहनना-ओढ़ना और सिर के ऊपर साया चाहिए। इसलिए जीविका के तात्कालिक भौतिक साधनों का उत्पादन और फलत: किसी युग में अथवा किसी जाति द्वारा उपलब्ध आर्थिक विकास की यात्रा ही वह आधार है जिस पर राजकीय संस्थाएँ, क़ानूनी धारणाएँ, कला और यहाँ तक कि धर्म सम्बन्धी धारणाएँ भी विकसित होती हैं। इसलिए इस आधार के ही प्रकाश में इन सबकी व्याख्या की जा सकती है, न कि इससे उल्टा, जैसाकि अब तक होता रहा है।

परन्तु इतना ही नहीं, मार्क्स ने गति के उस विशेष नियम का पता लगाया जिससे उत्पादन की वर्तमान पूँजीवादी प्रणाली और इस प्रणाली से उत्पन्न पूँजीवादी समाज, दोनों ही नियन्त्रित हैं। अतिरिक्त मूल के आविष्कार से एक बारगी उस समस्या पर प्रकाश पड़ा, जिसे हल करने की कोशिश में किया गया अब तक का सारा अन्वेषण – चाहे वह पूँजीवादी अर्थशास्त्रियों ने किया हो या समाजवादी आलोचकों ने, अन्ध अन्वेषण ही था।

ऐसे दो आविष्कार एक जीवन के लिए काफ़ी हैं। वह मनुष्य भाग्यशाली है जिसे इस तरह का एक भी आविष्कार करने का सौभाग्य प्राप्त होता है। परन्तु जिस भी क्षेत्र में मार्क्स ने खोज की और उन्होंने बहुत से क्षेत्रों में खोज की और एक में भी सतही छानबीन करके ही नहीं रह गये, उसमें, यहाँ तक कि गणित में भी, उन्होंने स्वतन्त्र खोजें कीं।

ऐसे वैज्ञानिक थे वह। परन्तु वैज्ञानिक का उनका रूप उनके समग्र व्यक्तित्व का अर्द्धांश भी न था। मार्क्स के लिए विज्ञान ऐतिहासिक रूप

से एक गतिशील, क्रान्तिकारी शक्ति था। वैज्ञानिक सिद्धान्तों में किसी नयी खोज से, जिसके व्यावहारिक प्रयोग का अनुमान लगाना अभी सर्वथा असम्भव हो, उन्हें कितनी भी प्रसन्नता क्यों न हो, जब उनकी खोज से उद्योग-धन्धे और सामान्यत: ऐतिहासिक विकास में कोई तात्कालिक क्रान्तिकारी परिवर्तन होते दिखायी देते थे, तब उन्हें बिल्कुल ही दूसरे ढंग की प्रसन्नता का अनुभव होता था। उदाहरण के लिए बिजली के क्षेत्र में हुए अविष्कारों के विकास क्रम का और मरसैल देप्रे के हाल के अविष्कारों का मार्क्स बड़े ग़ौर से अध्ययन कर रहे थे।

मार्क्स सर्वोपरि क्रान्तिकारी थे। जीवन में उनका असली उद्देश्य किसी न किसी तरह पूँजीवादी समाज और उससे पैदा होने वाली राजकीय संस्थाओं के ध्वंस में योगदान करना था, आधुनिक सर्वहारा वर्ग को आज़ाद करने में योग देना था, जिसे सबसे पहले उन्होंने ही अपनी स्थिति और आवश्यकताओं के प्रति सचेत किया और बताया कि किन परिस्थितियों में उसका उद्धार हो सकता है। संघर्ष करना उनका सहज गुण था। और उन्होंने ऐसे जोश, ऐसी लगन और सफलता के साथ संघर्ष किया जिसका मुक़ाबला नहीं है। प्रथम 'राइनिश ज़ाइटुंग' (1842 में), पेरिस के 'वोरवार्ट्स' (1844 में), 'डायचे ब्रसलेर ज़ाइटुंग' (1847 में), 'न्यू राइनिश ज़ाइटुंग' (1848-1849 में), 'न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून' (1852-1861 में) उनका काम, इनके अलावा अनेक जोशीली पुस्तिकाओं की रचना, पेरिस, ब्रसेल्स और लन्दन के संगठनों में काम और अन्तत: उनकी चरम उपलब्धि महान अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ की स्थापना। यह इतनी बड़ी उपलब्धि थी कि इस संगठन का संस्थापक, यदि उसने कुछ भी और न किया होता, उस पर उचित ही गर्व कर सकता था।

इस सबके फलस्वरूप मार्क्स अपने युग में सबसे अधिक विद्वेष तथा लांछना के शिकार बने। निरंकुशतावादी और जनतन्त्रवादी, दोनों ही तरह की सरकारों ने उन्हें अपने राज्यों से निकाला। पूँजीपति, चाहे वे रूढ़िवादी हों चाहे घोर जनवादी, मार्क्स को बदनाम करने में एक-दूसरे से होड़ करते थे। मार्क्स इस सबको यूँ झटकारकर अलग कर देते थे जैसे वह मकड़ी का जाला हो, उसकी ओर ध्यान न देते थे, आवश्यकता से बाध्य होकर ही उत्तर देते थे। और अब वह इस संसार में नहीं है।

साइबेरिया की खानों से लेकर कैलिफ़ोर्निया तक, यूरोप और अमेरिका के सभी भागों में उनके लाखों क्रान्तिकारी मज़दूर साथी जो उन्हें प्यार करते थे, उनके प्रति श्रद्धा रखते थे, आज उनके निधन पर आँसू बहा रहे हैं। मैं यहाँ तक कह सकता हूँ कि चाहे उनके विरोधी बहुत से रहे हों, परन्तु उनका कोई व्यक्तिगत शत्रु शायद ही रहा हो। उनका नाम युगों-युगों तक अमर रहेगा, वैसे ही उनका काम भी अमर रहेगा!

(एंगेल्स द्वारा हाइगेट क़ब्रिस्तान, लन्दन में 17 मार्च 1883 को अंग्रेज़ी में दिया गया भाषण।)

हरसूर्या हेल्थकेयर, गुड़गाँव के मज़दूरों का संघर्ष

(पेज 4 से आगे)

समझौते के बाद सात मज़दूरों को छोड़कर बाक़ी सबको काम पर वापस रख लिया गया, और बचे हुए सात लोगों को अभी भी मालिक ने अपने "आचरण सुधारने" की चेतावनी देकर दो महीने के लिए निलम्बित कर रखा है। मालिक ने इस शर्त पर कम्पनी में काम शुरू करवाया है कि आगे से कोई भी मज़दूर कम्पनी के प्रबन्धन के साथ कोई बहस या कोई आन्दोलन नहीं करेगा, और मज़दूर मालिक के प्रति 'अच्छा आचरण' करेंगे।

इन शर्तों को मान लेने के बाद पूरा संघर्ष ही समाप्त हो गया। पहले चार मज़दूर बाहर थे तो हड़ताल की गयी थी लेकिन फिर सात लोगों को बाहर रखने के मालिक के निर्णय के बाद भी समझौता कर लिया गया! यहाँ तक कि समझौते के बाद एचएमएस के नेताओं ने मज़दूरों से कहा कि आगे क्या करना है उसे वे ख़ुद देख लेंगे और अब मज़दूरों को कुछ करने की ज़रूरत नहीं है। इस पूरे संघर्ष के निचोड़ के तौर पर देखा जाये तो मज़दूरों के हित में एक भी निर्णय नहीं हुआ, उनकी कोई भी माँग पूरी नहीं हुई, और एचएमएस ने मज़दूरों को मालिक का आज्ञाकारी बने रहने की शर्त पर समझौता कर लिया। वह भी तब जबकि मज़दूर जुझारू संघर्ष करने के लिए तैयार थे। आन्दोलन का नेतृत्व कर रही एचएमएस दूसरी फ़ैक्टरियों की अपनी यूनियनों के समर्थन से मज़दूरों के साथ मिलकर संघर्ष को व्यापक बना सकती थी। लेकिन किसी न किसी चुनावी पार्टी से जुड़ी ये सारी बड़ी यूनियनें अब कोई भी जुझारू संघर्ष करने की क्षमता और नीयत दोनों ही खो चुकी हैं।

अगर इस आन्दोलन को व्यापक बनाया जाता और मैनेजमेण्ट पर दबाव बनाये रखा जाता तो मज़दूरों की कुछ या अधिकांश माँगें मनवायी जा सकती थीं। अगर इसमें पूरी सफलता नहीं भी मिलती तो भी मालिकों सहित पूरी प्रशासन-व्यवस्था का राजनीतिक भण्डाफोड़ करके पूँजीवादी शोषण के असली नंगे चेहरे को मज़दूरों के सामने लाया जा सकता था, और उन्हें राजनीतिक रूप से शिक्षित किया जा सकता था जो कि वर्तमान दौर के मज़दूर संघर्षों का एक अहम कार्य है। लेकिन सिर्फ़ आर्थिक संघर्षों में फँसी इस तरह की ट्रेडयूनियनें मज़दूरों की राजनीतिक चेतना को उन्नत करने के बजाय समझौता करके संघर्ष को अधूरा छोड़ देती हैं, क्योंकि इनका नेतृत्व मज़दूरों को शिक्षित करने, उन्हें उनके ऐतिहासिक कर्तव्य की याद दिलाने की कोई आवश्यकता नहीं समझता। उन्हें मज़दूरों के आर्थिक संघर्षों से आगे कोई लेना-देना नहीं है। उन्हें पूँजीवाद में होने वाले मज़दूरों के शोषण से ज़्यादा फ़र्क़ नहीं पड़ता, वे मज़दूरों को पूँजीवाद के भीतर ही कुछ बेहतर वेतन और भत्ते दिलवाकर शान्त रखना चाहती हैं, और अब तो इतना भी नहीं कर पा रही हैं। इस प्रकार की ट्रेडयूनियनें मज़दूरों को उनके अन्तिम लक्ष्य, पूँजीवाद को ध्वस्त करके एक शोषणविहीन समाज की स्थापना, के ज्ञान से लैस करने के बजाय उन्हें अठन्नी-चवन्नी की लड़ाइयों में उलझाकर रखना चाहती हैं। इस तरह देखें तो वे पूँजीपतियों और पूँजीवादी व्यवस्था की एक रक्षापंक्ति का ही काम करती हैं।

आज मज़दूरों को समझना होगा कि जब तक वे ट्रेडयूनियन आन्दोलन को क्रान्तिकारी धार नहीं देंगे और व्यापक इलाक़ाई तथा पेशागत एकजुटता बनाने की पहल नहीं करेंगे, तब तक एक-एक फ़ैक्टरी के अलग-अलग मालिक के ख़िलाफ़ चलने वाले संघर्षों में उन्हें अगर कोई जीत हासिल हुई भी तो वह आंशिक ही हो सकती है। इसीलिए आज मज़दूरों को उनके दूरगामी लम्बे संघर्ष को ध्यान में रखते हुए राजनीतिक रूप से शिक्षित करने और उनकी वर्गीय माँगों को लेकर एकजुट करने का समय है।

– राजकुमार

गौतम नवलखा जैसे मानवाधिकार कार्यकर्ताओं पर बन्दिश लगाकर भारत सरकार कश्मीर की सच्चाई को छुपा नहीं सकती

भारत सरकार कश्मीर में जनता के दमन और उत्पीड़न की सच्चाई को देश की जनता से छुपाने की लगातार कोशिश करती है। सेना और अर्द्धसैनिक बलों द्वारा मानवाधिकारों के उल्लंघन के हज़ारों मामले राष्ट्र की सुरक्षा के नाम पर दबा दिये जाते हैं। अवैध गिरफ़्तारियाँ, फ़र्ज़ी मुठभेड़ों में नौजवानों की हत्याएँ, सैनिकों द्वारा बलात्कार, अपहरण की न जाने कितनी घटनाएँ सामने लायी जा चुकी हैं लेकिन किसी भी मामले में जनता को इंसाफ़ नहीं मिला। पिछले कुछ महीनों से सरकार कश्मीरी लोगों के साथ वार्ताओं का एक नाटक चला रही है लेकिन सच तो यह है कि कश्मीर में सेना और पुलिस के दम पर जनता का गला घोंटकर रखा गया है जो वहाँ के आम लोगों और नौजवानों में भारत के ख़िलाफ़ नफ़रत को और तेज़ करने का ही काम कर रहा है। मुख्यमन्त्री उमर अब्दुल्ला की सरकार पूरी तरह जनता से कट चुकी है और राज्य को एक ऐसी जेल में तब्दील कर दिया है जहाँ अत्याचारों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने की कोई गुंजाइश नहीं है।

जाने-माने मानवाधिकार कर्मी और प्रसिद्ध पत्रिका 'इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली' के सम्पादकीय सलाहकार गौतम नवलखा को भी 28 मई को श्रीनगर हवाई अड्डे पर हिरासत में ले लिया गया और उन्हें श्रीनगर में प्रवेश की अनुमति नहीं दी गयी। श्री नवलखा पिछले दो दशकों के दौरान अनेक बार कश्मीर की यात्रा पर गये हैं और वहाँ सुरक्षा बलों द्वारा मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों को मुखरता से उठाते रहे हैं। हालाँकि इस बार वे अपनी मित्र के साथ निजी यात्रा पर कश्मीर जा रहे थे। श्रीनगर पहुँचने पर विमान से उतरते ही उन्हें हिरासत में ले लिया गया और उन्हें वापस दिल्ली जाने के लिए कहा गया। उस दिन कोई फ़्लाइट नहीं होने के कारण उन्हें पुलिस हिरासत में रखा गया और किसी को उनसे मिलने की इजाज़त नहीं दी गयी। अगले दिन उन्हें वापस दिल्ली भेज दिया गया।

श्री नवलखा कश्मीर में भारी संख्या में सशस्त्र बलों की मौजूदगी का विरोध करते रहे हैं। वह निरंकुश सशस्त्र बल विशेषाधिकार क़ानून को वापस लेने के अभियान में अग्रिम मोर्चे पर रहे हैं। यह क़ानून सशस्त्र बलों को किसी को भी गिरफ़्तार करने और जान से मार देने तक के मनमाने अधिकार देता है। पिछले पाँच दशकों में कश्मीर और उत्तर-पूर्व के राज्यों में इसका बड़े पैमाने पर दुरुपयोग किया गया है और इन राज्यों की आम जनता इस क़ानून का कड़ा विरोध करती रही है। मणिपुर की इरोम शर्मिला पिछले 11 वर्ष से इसी क़ानून के ख़िलाफ़ भूख हड़ताल पर हैं।

राज्य सरकार ने गौतम नवलखा को कश्मीर में प्रवेश की अनुमति देने से इंकार को सही ठहराते हुए कहा कि उनके जाने से शान्ति-व्यवस्था के लिए ख़तरा हो सकता था। सच है। जब सत्ता झूठ पर टिकी हो तो सच्चाई सामने लाने वालों से शान्ति-व्यवस्था को ख़तरा तो होगा ही। यह कार्रवाई साबित करती है कि सभी दमनकारी राज्यों को सबसे ज़्यादा ख़तरा 'सच्चाई' से होता है।

गौतम नवलखा जैसे विख्यात बुद्धिजीवी व एक्टिविस्ट के साथ इस तरह का सुलूक बताता है कि आम कश्मीरी अवाम को वास्तव में कितनी आज़ादी हासिल है।

मई दिवस 1947

यह एक गाथा है... पर आप सबके लिए नहीं!

हावर्ड फ़ास्ट

वर्ष 1947 के मई दिवस के अवसर पर लिखा गया प्रसिद्ध अमेरिकी उपन्यासकार हावर्ड फ़ास्ट का यह लेख मई दिवस की गौरवशाली परम्पराओं की याद एक ऐसे समय में करता है जब अमेरिका में लम्बे संघर्षों से हासिल मज़दूर अधिकारों पर हमला बोला जा रहा था। आज भारत में देशी-विदेशी पूँजी की मिली-जुली ताक़त ने श्रम पर ज़बरदस्त हमला बोल दिया है। ऐसे में यह लेख आज भारत के मज़दूरों के लिए लिखा गया महसूस होता है, और मई दिवस की यह गाथा उत्साह और जोश से भर देती है। इसका अनुवाद 1946 के नौसेना विद्रोह में शामिल रहे 'मज़दूर बिगुल' के वयोवृद्ध सहयोगी **सुरेन्द्र कुमार** ने किया है। – सं.

यह गाथा आपमें से बस उनके लिए है जो ज़िन्दगी से प्यार करते हैं और जो आज़ाद इन्सानों की तरह जीना चाहते हैं। आप सबके लिए नहीं, आपमें से बस उनके लिए, जो हर उस चीज़ से नफ़रत करते हैं, जो अन्यायपूर्ण और ग़लत है, जो भूख, बदहाली और बेघर होने में कोई कल्याणकारी तत्व नहीं देखते। आपमें से उनके लिए, जिन्हें वह समय याद है, जब एक करोड़ बीस लाख बेरोज़गार सूनी आँखों से भविष्य की ओर ताक रहे थे।

यह एक गाथा है, उनके लिए, जिन्होंने भूख से तड़पते बच्चे या पीड़ा से छटपटाते इन्सान की मन्द पड़ती कराह सुनी है। उनके लिए, जिन्होंने बन्दूक़ों की गड़गड़ाहट सुनी है और टारपीडो के दागे जाने की आवाज़ पर कान लगाये हों। उनके लिए, जिन्होंने फ़ासिज़्म द्वारा बिछायी गयी लाशों का अम्बार देखा है। उनके लिए, जिन्होंने युद्ध के दानव की मांसपेशियों को मज़बूत बनाया था, और बदले में जिन्हें एटमी मौत का ख़ौफ़ दिया गया था।

यह गाथा उनके लिए है। उन माताओं के लिए जो अपने बच्चों को मरता नहीं बल्कि ज़िन्दा देखना चाहती हैं। उन मेहनतकशों के लिए जो जानते हैं कि फ़ासिस्ट सबसे पहले मज़दूर यूनियनों को ही तोड़ते हैं। उन भूतपूर्व सैनिकों के लिए, जिन्हें मालूम है कि जो लोग युद्धों को जन्म देते हैं, वे ख़ुद लड़ाई में नहीं उतरते। उन छात्रों के लिए, जो जानते हैं कि आज़ादी और ज्ञान को अलग-अलग नहीं किया जा सकता। उन बुद्धिजीवियों के लिए, जिनकी मौत निश्चित है यदि फ़ासिज़्म ज़िन्दा रहता है। उन नीग्रो लोगों के लिए, जो जानते हैं कि जिम-क्रो' और प्रतिक्रियावाद दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। उन यहूदियों के लिए जिन्होंने हिटलर से सीखा कि यहूदी विरोध की भावना असल में क्या होती है। और यह गाथा बच्चों के लिए, सारे बच्चों के लिए, हर रंग, हर नस्ल, हर आस्था-धर्म के बच्चों के लिए – उन सबके लिए लिखी गयी है, ताकि उनका भविष्य जीवन से भरपूर हो, मौत से नहीं।

यह गाथा है जनता की शक्ति की, उनके अपने उस दिन की, जिसे उन्होंने स्वयं चुना था और जिस दिन वे अपनी एकता और शक्ति का पर्व मनाते हैं। यह वह दिन है, जो अमरीकी मज़दूर वर्ग का संसार को उपहार था और जिस पर हमें हमेशा फ़ख़्र रहेगा।

उन्होंने आपको यह नहीं बताया

...स्कूल में आपने इतिहास की जो पुस्तकें पढ़ी होंगी उनमें उन्होंने यह नहीं बताया होगा कि "मई दिवस" की शुरुआत कैसे हुई थी। लेकिन हमारे अतीत में बहुत कुछ उदात्त था और साहस से भरपूर था, जिसे इतिहास के पन्नों से बहुत सावधानी से मिटा दिया गया है। कहा जाता है कि "मई दिवस" विदेशी परिघटना है, लेकिन जिन लोगों ने 1886 में शिकागो में पहले मई दिवस की रचना की थी, उनके लिए इसमें कुछ भी बाहर का नहीं था। उन्होंने इसे देसी सूत से बुना था। उजरती मज़दूरी की व्यवस्था इन्सानों का जो हश्र करती है उसके प्रति उनका गुस्सा किसी बाहरी स्रोत से नहीं आया था।

पहला "मई दिवस" 1886 में शिकागो नगर में मनाया गया। उसकी भी एक पूर्वपीठिका थी, जिसके दृश्यों को याद कर लेना अनुपयुक्त नहीं होगा। 1886 के एक दशक पहले से अमेरिकी मज़दूर वर्ग जन्म और विकास की प्रक्रिया से गुज़र रहा था। यह नया देश जो थोड़े-से समय में एक महासागर से दूसरे महासागर तक फैल गया था, उसने शहर पर शहर बनाये, मैदानों पर रेलों का जाल बिछा दिया, घने जंगलों को काटकर साफ़ किया, और अब वह विश्व का पहला औद्योगिक देश बनने जा रहा था। और ऐसा करते हुए वह उन लोगों पर ही टूट पड़ा जिन्होंने अपनी मेहनत से यह सब सम्भव बनाया था, वह सबकुछ बनाया था जिसे अमेरिका कहा जाता था, और उनके जीवन की एक-एक बूँद निचोड़ ली।

स्त्री-पुरुष और यहाँ तक कि बच्चे भी अमेरिका की नयी फ़ैक्टरियों में हाड़तोड़ मेहनत करते थे। बारह घण्टे का काम का दिन आम चलन था, चौदह घण्टे का काम भी बहुत असामान्य नहीं था, और कई जगहों पर बच्चे भी एक-एक दिन में सोलह और अठारह घण्टे तक काम करते थे। मज़दूरी बहुत ही कम हुआ करती थी, वह अक्सर दो जून रोटी के लिए भी नाकाफ़ी होती थी, और बार-बार आने वाली मन्दी की कड़वी नियमितता के साथ बड़े पैमाने पर बेरोज़गारी के दौर आने लगे। सरकारी निषेधाज्ञाओं के ज़रिये शासन रोज़मर्रा की बात थी।

परन्तु अमरीकी मज़दूर वर्ग रीढ़विहीन नहीं था। उसने यह स्थिति स्वीकार नहीं की, उसे क़िस्मत में बदी बात मानकर सहन नहीं किया। उसने मुक़ाबला किया और पूरी दुनिया के मेहनतकशों को जुझारूपन का पाठ पढ़ाया। ऐसा जुझारूपन जिसकी आज भी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती।

1877 में वेस्ट वर्जीनिया प्रदेश के मार्टिन्सबर्ग में रेल-हड़ताल शुरू हुई। हथियारबन्द पुलिस बुला ली गयी और मज़दूरों के साथ एक छोटी लड़ाई के बाद हड़ताल कुचल दी गयी। लेकिन केवल स्थानीय तौर पर; जो चिनगारी भड़की थी, वह ज्वाला बन गयी। "बाल्टीमोर और ओहायो" रेलमार्ग बन्द हुआ, फिर पेन्सिलवेनिया बन्द हुआ, और फिर एक के बाद दूसरी रेल कम्पनियों का चक्का जाम होता चला गया। और आख़िरकार एक छोटा-सा स्थानीय उभार इतिहास में उस समय तक ज्ञात सबसे बड़ी रेल हड़ताल बन गया। दूसरे उद्योग भी उसमें शामिल हो गये और कई इलाक़ों में यह रेल-हड़ताल एक आम हड़ताल में तब्दील हो गयी।

पहली बार सरकार और साथ ही मालिकों को भी पता चला कि मज़दूर की ताक़त क्या हो सकती है। उन्होंने पुलिस और फ़ौज बुलायी; जगह-जगह जासूस तैनात किये गये। कई जगहों पर जमकर लड़ाइयाँ हुईं। सेण्ट लुई में नागरिक प्रशासन के अधिकारियों ने हथियार डाल दिये और नगर मज़दूर वर्ग के हवाले कर दिया। उन लोमहर्षक उभारों में कितने हताहत हुए होंगे, उन्हें आज कोई नहीं गिन सकता। परन्तु हताहतों की संख्या बहुत बड़ी रही होगी, इस पर कोई भी, जिसने तथ्यों का अध्ययन किया है, सन्देह नहीं कर सकता।

हड़ताल आख़िरकार टूट गयी। परन्तु अमरीकी मज़दूरों ने अपनी भुजाएँ फैला दी थीं और उनमें नयी जागरूकता का संचार हो रहा था। प्रसव-वेदना समाप्त हो चुकी थी और अब वह वयस्क होने लगा था।

अगला दशक संघर्ष का दौर था, आरम्भ में अस्तित्व का संघर्ष और फिर संगठन बनाने का संघर्ष। सरकार ने 1877 को आसानी से नहीं भुलाया; अमेरिका के अनेक शहरों में शस्त्रागारों का निर्माण होने लगा; मुख्य सड़कें चौड़ी की जाने लगीं, ताकि "गैटलिंग" मशीनगनें उन्हें अपने नियन्त्रण में रख सकें। एक मज़दूर-विरोधी प्राइवेट पुलिस संगठन "पिंकरटन एजेंसी" का गठन किया गया, और मज़दूरों के ख़िलाफ़ उठाये गये क़दम अधिक से अधिक दमनकारी होते चले गये। वैसे तो अमेरीका में दुष्प्रचार के तौर पर "लाल ख़तरे" शब्द का इस्तेमाल 1830 के दशक से ही होता चला आया था, लेकिन उसे अब एक ऐसे डरावने हौवे का रूप दे दिया गया, जो आज प्रत्यक्ष तौर पर हमारे सामने है।

परन्तु मज़दूरों ने इसे चुपचाप स्वीकार नहीं किया। उन्होंने भी अपने भूमिगत संगठन बनाये। भूमिगत रूप में जन्मे संगठन नाइट्स ऑफ़ लेबर के सदस्यों की संख्या 1886 तक 7,00,000 से ज़्यादा हो गयी थी। नवजात अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर का मज़दूर यूनियनों की स्वैच्छिक संस्था के रूप में गठन किया गया, समाजवाद जिसके लक्ष्यों में एक लक्ष्य था। यह संस्था बहुत तेज़ रफ़्तार से विकसित होती चली गयी। यह वर्ग-सचेत और जुझारू थी और अपनी माँगों पर टस-से-मस न होने वाली थी। एक नया नारा बुलन्द हुआ। एक नयी, दो टूक, सुस्पष्ट माँग पेश की गयी : **"आठ घण्टे काम, आठ घण्टे आराम, आठ घण्टे मनोरंजन"।**

1886 तक अमेरिकी मज़दूर नौजवान योद्धा बन चुका था, जो अपनी ताक़त परखने के लिए मौक़े की तलाश कर रहा था। उसका मुक़ाबला करने के लिए सरकारी शस्त्रागारों का निर्माण किया गया था, पर वे नाकाफ़ी थे। "पिंकरटनों" का प्राइवेट पुलिस दल भी काफ़ी नहीं था, न ही गैटलिंग मशीनगनें। संगठित मज़दूर अपने क़दम बढ़ा रहा था, और उसका एकमात्र जुझारू नारा देश और यहाँ तक कि धरती के आर-पार गूँज रहा था : **"एक दिन में आठ घण्टे का काम – इससे ज़रा भी ज़्यादा नहीं!"**

1886 के उस ज़माने में, शिकागो जुझारू, वामपक्षी मज़दूर आन्दोलन का केन्द्र था। यहीं शिकागो में संयुक्त मज़दूर प्रदर्शन के विचार ने जन्म लिया, एक दिन जो उनका दिन हो किसी और का नहीं, एक दिन जब वे अपने औज़ार रख देंगे और कन्धे से कन्धा मिलाकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करेंगे।

पहली मई को मज़दूर वर्ग के दिवस, जनता के दिवस के रूप में चुना गया। प्रदर्शन से काफ़ी पहले ही "आठ घण्टा संघ" नाम की एक संस्था गठित की गयी। यह आठ घण्टा संघ एक संयुक्त मोर्चा था, जिसमें अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर, नाइट्स ऑफ़ लेबर और समाजवादी मज़दूर पार्टी शामिल थे। शिकागो की सेण्ट्रल लेबर यूनियन भी, जिसमें सबसे अधिक जुझारू वामपक्षी यूनियनें शामिल थीं, इससे जुड़ी थी।

शिकागो से हुई शुरुआत कोई मामूली बात नहीं थी। "मई दिवस" की पूर्ववेला में एकजुटता के लिए आयोजित सभा में 25,000 मज़दूर उपस्थित हुए। और जब "मई दिवस" आया, तो उसमें भाग लेने के लिए शिकागो के हज़ारों मज़दूर अपने औज़ार छोड़कर फ़ैक्टरियों से निकलकर मार्च करते हुए जनसभाओं में शामिल होने पहुँचने लगे। और उस समय भी, जबकि "मई दिवस" का आरम्भ ही हुआ था, मध्य वर्ग के हज़ारों लोग मज़दूरों की क़तारों में शामिल हुए और समर्थन का यह स्वरूप अमेरिका के कई अन्य शहरों में भी दोहराया गया।

और आज की तरह उस वक़्त भी बड़े पूँजीपतियों ने जवाबी हमला किया – रक्तपात, आतंक, न्यायिक हत्या को ज़रिया बनाया गया। दो दिन बाद मैकार्मिक रीपर कारख़ाने में, जहाँ हड़ताल चल रही थी, एक आम सभा पर पुलिस ने हमला किया। उसमें छह मज़दूरों की हत्या हुई। अगले दिन इस जघन्य कार्रवाई के विरुद्ध हे मार्केट चौक पर जब मज़दूरों ने प्रदर्शन किया, तो पुलिस ने उन पर फिर हमला किया। कहीं से एक बम फेंका गया, जिसके फटने से कई मज़दूर और पुलिसवाले मारे गये। इस बात का कभी पता नहीं चल पाया कि बम किसने फेंका था, इसके बावजूद चार अमेरिकी मज़दूर नेताओं को फाँसी दे दी गयी, उस अपराध के लिए, जो उन्होंने कभी किया ही नहीं था और जिसके लिए वे निर्दोष सिद्ध हो चुके थे।

इन वीर शहीदों में से एक, **ऑगस्ट स्पाइस,** ने फाँसी की तख़्ती से घोषणा की :

"एक वक़्त आयेगा, जब हमारी ख़ामोशी उन आवाज़ों से ज़्यादा ताक़तवर सिद्ध होगी, जिनका तुम आज गला घोंट रहे हो।" समय ने इन शब्दों की सच्चाई को प्रमाणित कर दिया है। शिकागो ने दुनिया को "मई दिवस" दिया, और इस बासठवें मई दिवस पर करोड़ों की संख्या में एकत्र दुनियाभर के लोग ऑगस्ट स्पाइस की भविष्यवाणी को सच साबित कर रहे हैं।

शिकागो में हुए प्रदर्शन के तीन वर्ष बाद संसारभर के मज़दूर नेता बास्तीय क़िले पर धावे (जिसके साथ फ़्रांसीसी क्रान्ति की शुरुआत हुई) की सौवीं सालगिरह मनाने के लिए पेरिस में जमा हुए। एक-एक करके, अनेक देशों के नेताओं ने भाषण दिया।

आख़िर में अमेरीकियों के बोलने की बारी आयी। जो मज़दूर हमारे मज़दूर वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहा था, खड़ा हुआ और बिल्कुल सरल और दो टूक भाषा में उसने आठ घण्टे के कार्यदिवस के संघर्ष की कहानी बयान की जिसकी परिणति 1886 में हे मार्केट का शर्मनाक काण्ड था।

उसने हिंसा, ख़ूरेज़ी, बहादुरी का जो सजीव चित्र पेश किया, उसे सम्मेलन में आये प्रतिनिधि वर्षों तक नहीं भूल सके। उसने बताया कि पार्सन्स ने कैसे मृत्यु का वरण किया था, जबकि उससे कहा गया था कि अगर वह अपने साथियों से गद्दारी करे और क्षमा माँगे तो उसे फाँसी नहीं दी जायेगी। उसने श्रोताओं को बताया कि कैसे दस आयरिश ख़ान मज़दूरों को पेनसिल्वेनिया में इसलिए फाँसी दी गयी थी कि

(पेज 19 पर जारी)

यह एक गाथा है... पर आप सबके लिए नहीं!

(पेज 18 से आगे)

उन्होंने मज़दूरों के संगठित होने के अधिकार के लिए संघर्ष किया था। उसने उन वास्तविक लड़ाइयों के बारे में बताया जो मज़दूरों ने हथियारबन्द "पिंकरटनों" से लड़ी थीं, और उसने और भी बहुत कुछ बताया। जब उसने अपना भाषण समाप्त किया तो पेरिस कांग्रेस ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

''कांग्रेस फ़ैसला करती है कि राज्यों के अधिकारियों से कार्य दिवस को क़ानूनी ढंग से घटाकर आठ घण्टे करने की माँग करने के लिए और साथ ही पेरिस कांग्रेस के अन्य निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए समस्त देशों और नगरों से मेहनतकश अवाम एक निर्धारित दिन एक महान अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन संगठित करेंगे। चूँकि अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर पहली मई 1890 को ऐसा ही प्रदर्शन करने का फ़ैसला कर चुका है, "अतः यह दिन अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन के लिए स्वीकार किया जाता है। विभिन्न देशों के मज़दूरों को प्रत्येक देश में विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार यह प्रदर्शन अवश्य आयोजित करना चाहिए।"

तो इस निश्चय पर अमल किया गया और "मई दिवस" पूरे संसार की धरोहर बन गया। अच्छी चीज़ें किसी एक जनता या राष्ट्र की सम्पत्ति नहीं होतीं। एक के बाद दूसरे देश के मज़दूर ज्यों-ज्यों मई दिवस को अपने जीवन, अपने संघर्षों, अपनी आशाओं का अविभाज्य अंग बनाते गये, वे मानकर चलने लगे कि यह दिन उनका है – और यह भी सही है, क्योंकि पृथ्वी पर मौजूद समस्त राष्ट्रों के बरक्स हम राष्ट्रों का राष्ट्र हैं, सभी लोगों और सभी संस्कृतियों का समुच्चय हैं।

और आज के मई दिवस की क्या विशेषता है

पिछले मई दिवस गत आधी शताब्दी के संघर्षों को प्रकाश-स्तम्भों की भाँति आलोकित करते हैं। इस शताब्दी के आरम्भ में मई दिवस के ही दिन मज़दूर वर्ग ने परायी धरती को हड़पने की साम्राज्यवादी कार्रवाइयों की सबसे पहले भर्त्सना की थी। मई दिवस के ही अवसर पर मज़दूरों ने नवजात समाजवादी राज्य सोवियत संघ का समर्थन करने के लिए आवाज़ बुलन्द की थी। मई दिवस के अवसर पर ही हमने अपनी भरपूर शक्ति से असंगठितों के संगठन का समारोह मनाया था।

लेकिन बीते किसी भी मई दिवस पर कभी ऐसे अनिष्टसूचक लेकिन साथ ही इतने आशा भरे भविष्य-संकेत नहीं दिखायी दिये थे, जितना कि आज के मई दिवस पर हो रहा है। **पहले कभी हमारे पास जीतने को इतना कुछ नहीं था, पहले कभी हमारे खोने को इतना कुछ नहीं था।**

जनता के लिए अपनी बात कह पाना आसान नहीं है। लोगों के पास अख़बार या मंच नहीं है, और न ही सरकार में शामिल हमारे चुने गए प्रतिनिधियों की बहुसंख्या जनता की सेवा करती है। रेडियो जनता का नहीं है और न फ़िल्म बनाने वाली मशीनरी उसकी है। बड़े कारोबारों की इज़ारेदारी अच्छी तरह स्थापित हो चुकी है, काफ़ी अच्छी तरह – लेकिन लोगों पर तो किसी का एकाधिकार नहीं है।

जनता की ताक़त उसकी अपनी ताक़त है। मई दिवस उसका अपना दिवस है, अपनी यह ताक़त प्रदर्शित करने का दिन है। क़दम से क़दम मिलाकर बढ़ते लाखों लोगों की क़तारों के बीच अलग से एक आवाज़ बुलन्द हो रही है। यह वक़्त है कि वे लोग, जो अमरीका को फ़ासिज़्म के हवाले करने पर आमादा हैं, इस आवाज़ को सुनें।

उन्हें यह बताने का वक़्त है कि वास्तविक मज़दूरी लगभग पचास प्रतिशत घट गयी है, कि घरों में अनाज के कनस्तर ख़ाली हैं, कि यहाँ अमेरिका में अधिकाधिक लोग भूख की चपेट में आ रहे हैं।

यह वक़्त है श्रम विरोधी क़ानूनों के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द करने का। दो सौ से ज़्यादा श्रम विरोधी क़ानूनों के विधेयक कांग्रेस के समक्ष विचाराधीन आ रहे हैं, जो यक़ीनन मज़दूरों को उसी तरह तोड़ डालने के रास्ते खोल देंगे, जिस तरह हिटलर के नाज़ीवाद ने जर्मन मज़दूरों को तोड़ डाला था।

संगठित अमेरिकी मज़दूरों के लिए आँख खोलकर यह तथ्य देखने का वक़्त आ गया है कि यह मज़दूरों की एकता क़ायम करने की आख़िरी घड़ी है वरना बहुत देर हो जायेगी और एकताबद्ध करने के लिए संगठित मज़दूर रहेंगे ही नहीं।

आप यहाँ पढ़ रहे हैं गाथा, उन लोगों की जो बारह से पन्द्रह घण्टे रोज़ काम करते थे, आप पढ़ रहे हैं गाथा, उस सरकार की, जो आतंक और निषेधाज्ञाओं के बल पर चल रही है।

यह है उन लोगों का लक्ष्य, जो आज श्रमिकों को चकनाचूर करना चाहते हैं। वे अपने "अच्छे" दिनों को फिर वापस लाना चाहते हैं। इसका सबूत यूनाइटेड माइन के खनिक मज़दूरों के मामले में सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला है। आप जब मई दिवस के अवसर पर मार्च करेंगे तो आप उन्हें अपना जवाब देंगे।

वक़्त आ गया है यह समझने का कि "अमरीकी साम्राज्य" के आह्वान का, यूनान, तुर्की और चीन में हस्तक्षेप से क्या रिश्ता है! साम्राज्य की क़ीमत क्या है? जो दुनिया पर राज कर दुनिया को "बचाने" के लिए चीख़ रहे हैं, उन्हें दूसरे साम्राज्यों के अंजाम को याद करना चाहिए। उन्हें यह आँकना चाहिए कि ज़िन्दगी और धन दोनों अर्थों में युद्ध की क्या क़ीमत होती है।

वक़्त आ गया है यह देखने के लिए जाग उठने का कि कम्युनिस्टों के पीछे शिकारी कुत्ते छोड़े जाने का क्या अर्थ है? क्या एक भी ऐसा कोई देश है, जहाँ कम्युनिस्ट पार्टी को ग़ैरक़ानूनी घोषित किया जाना फ़ासिज़्म की पूर्वपीठिका न रहा हो? क्या ऐसा कोई एक भी देश है, जहाँ कम्युनिस्टों को रास्ते से हटाते ही मज़दूर यूनियनों को चकनाचूर न कर दिया गया हो?

वक़्त आ गया है कि हम हालात की क़ीमत को समझें। कम्युनिस्टों को प्रताड़ित करने के अभियान की क़ीमत था संगठित मज़दूरों को ठिकाने लगाना – उसकी क़ीमत है फ़ासिज़्म। और आज ऐसा कौन है, जो इस बात को स्वीकार नहीं करेगा कि फ़ासिज़्म की क़ीमत मौत है?

मई दिवस इस देश के समस्त स्वतन्त्रताप्रिय नागरिकों के लिए प्रतिगामियों को जवाब देने का वक़्त है। मार्च करते जा रहे लाखों-लाख लोगों की एक ही आवाज़ बुलन्द हो रही है – मई दिवस प्रदर्शन में हमारे साथ आइये और मौत के सौदागरों को अपना जवाब दीजिये।

मेहनतकश वर्ग के चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न

"मेहनतकश साथियो! मई दिवस आ रहा है। वह दिन, जब तमाम देशों के मेहनतकश वर्ग चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न मनाते हैं, इन्सान के हाथों इन्सान के शोषण और दमन के ख़िलाफ़ अपनी संघर्षशील एकजुटता का इज़हार करते हैं, करोड़ों मेहनतकशों को भूख, ग़रीबी और ज़िल्लत की ज़िन्दगी से आज़ाद कराने की प्रतिज्ञा करते हैं। इस महान संघर्ष में दो दुनियाएँ रूबरू खड़ी हैं - सरमाये की दुनिया और मेहनत की दुनिया, शोषण तथा गुलामी की दुनिया।

एक तरफ़ खड़े हैं ख़ून चूसने वाले मुट्ठी भर अमीरो-उमरा, उन्होंने फ़ैक्टरियाँ और मिलें, औज़ार और मशीनें हथिया रखे हैं, उन्होंने करोड़ों एकड़ ज़मीन और दौलत के पहाड़ों को अपनी निजी जायदाद बना लिया है, उन्होंने सरकार और फ़ौज को अपना ख़िदमतगार, लूट-खसोट से इकट्ठा की हुई अपनी दौलत की रखवाली करने वाला वफ़ादार कुत्ता बना लिया है। दूसरी तरफ़ खड़े हैं उनकी लूट के शिकार करोड़ों ग़रीब। वे मेहनत-मज़दूरी के लिए भी उन धन्ना सेठों के सामने हाथ फैलाने पर मजबूर हैं। इनकी मेहनत के बल से ही सारी दौलत पैदा होती है। लेकिन रोटी के एक टुकड़े के लिए उन्हें तमाम उम्र एड़ियाँ रगड़नी पड़ती हैं। काम पाने के लिए भी गिड़गिड़ाना पड़ता है, कमरतोड़ श्रम में अपने ख़ून की आख़िरी बूँद तक झोंक देने के बाद भी गाँव की अँधेरी कोठरियों और शहरों की सड़ती, गन्दी बस्तियों में भूखे पेट ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ती है। ।

लेकिन अब उन ग़रीब मेहनतकशों ने दौलतमन्दों और शोषकों के ख़िलाफ़ जंग का ऐलान कर दिया है। तमाम देशों के मज़दूर श्रम को पैसे की गुलामी, ग़रीबी और अभाव से मुक्त कराने के लिए लड़ रहे हैं जिसमें साझी मेहनत से पैदा हुई दौलत से मुट्ठी भर अमीरों को नहीं बल्कि सब मेहनत करने वालों को फ़ायदा होगा। वे ज़मीन, फ़ैक्टरियों, मिलों और मशीनों को तमाम मेहनतकशों की साझी मिल्कियत बनाना चाहते हैं। वे अमीर-ग़रीब के अन्तर को ख़त्म करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि मेहनत का फल मेहनतकश को ही मिले, इन्सानी दिमाग़ की हर उपज काम करने के तरीक़ों मे आया हर सुधार मेहनत करने वालों के जीवन स्तर में सुधार लायें उसके दमन का साधन न बनें।

सरमाये के ख़िलाफ़ श्रम के भीषण संघर्ष में सब देशों के मज़दूरों को अनेक क़ुर्बानियाँ देनी पड़ी हैं। बेहतर जीवन और वास्तविक आज़ादी के अधिकार के लिए लड़ते हुए उनके ख़ून के दरिया बहे हैं। जो मज़दूरों के हित में लड़ते हैं उन्हें हुकूमतों के बर्बर अत्याचार झेलने पड़ते हैं, लेकिन इतने ज़ुल्मो-सितम के बावजूद दुनियाभर के मज़दूरों की एकता बढ़ रही है और वे लगातार, क़दम-ब-क़दम सरमायेदार शोषक वर्ग पर सम्पूर्ण विजय की ओर बढ़ रहे हैं।"

(रूसी क्रान्ति के महान नेता लेनिन ने 1904 में मई दिवस के अवसर पर यह पर्चा लिखा था।)

'सरूप सन्स' के मज़दूरों को जुझारू संघर्ष से मिली आंशिक जीत

(पेज 3 से आगे)

करते हैं। ऐसे में सीटू नेताओं की मजबूरी बनी कि वे आकर मोर्चा सँभालें। लेकिन उन्होंने बस यह बयान दे दिया कि जब तक मैनेजमेण्ट बात नहीं करेगा तक तब ओवरटाइम नहीं होगा। बिगुल मज़दूर दस्ता और कारख़ाना मज़दूर यूनियन द्वारा मज़दूरों के नाम जारी एक पर्चे तथा ओवरटाइम के पैसे में किये गये घपले के ख़िलाफ़ शुरू किये गये संघर्ष का बजाज ग्रुप के मज़दूरों ने ज़ोरदार स्वागत किया।

सीटू की हमेशा से ही नीति रही है कि प्रोडक्शन बढ़वाकर और अधिक से अधिक ओवरटाइम लगवाकर आमदनी बढ़वाने का ड्रामा किया जाये। यह नीति मज़दूरों के लिए बेहद ख़तरनाक है। मज़दूरों की असल लड़ाई तो आठ घण्टे के काम की मज़दूरी बढ़वाने तथा अन्य अधिकार हासिल करने की है। बिगुल मज़दूर दस्ता और कारख़ाना मज़दूर यूनियन के आह्वान का बजाज ग्रुप के मज़दूरों ने ज़ोरदार स्वागत किया। सीटू के नेताओं को मजबूरी में आपातकालीन मीटिंग करके कुशलता के मुताबिक़ वेतन लागू करवाने, पहचानपत्र बनवाने, ओवरटाइम का दोगुना भुगतान आदि माँगें उठानी पड़ीं। श्रम विभाग में तारीख़ें पड़ने लगीं। बिना मज़दूरों से पूछे और बिना मालिक से कुछ हासिल किये सीटू नेताओं ने ओवरटाइम चलवाने का समझौता कर लिया। इसके विरोध में मज़दूरों ने सीटू नेताओं द्वारा बुलायी गयी मीटिंग में सीटू और इसके नेताओं के ख़िलाफ़ जमकर नारे लगाये। 95 प्रतिशत मज़दूरों ने सीटू का फ़ैसला मानने से इनकार दिया। लेकिन सीटू नेताओं ने उन अगुवा मज़दूरों की लिस्ट कम्पनी को सौंप दी जो अब ओवरटाइम बन्द रखने के लिए मज़दूरों की अगुवाई कर रहे थे। अन्य मज़दूरों को भी सीटू ने तरह-तरह से धमकाकर और मज़दूरों को ओवरटाइम दुबारा शुरू करने के लिए बाध्य किया। लेकिन इस घटनाक्रम ने बजाज सन्स कम्पनी के मज़दूरों के बीच सीटू को बुरी तरह नंगा कर दिया है। बजाज सन्स के ये सारे मज़दूर अगर दलाल और समझौतापरस्त सीटू से पूरी तरह पीछा छुड़ाकर सरूप सन्स के मज़दूरों की राह अपनाते हैं तो इसमें कोई शक नहीं कि वे बड़ी उपलब्धियाँ हासिल कर सकते हैं।

– लखविन्दर

हम मेहनतकश जग वालों से जब
अपना हिस्सा माँगेंगे
इक खेत नहीं, इक देश
नहीं, हम सारी
दुनिया माँगेंगे!

माँगपत्रक शिक्षणमाला–6

प्रवासी मज़दूरों की दुरवस्था और उनकी माँगें मज़दूर आन्दोलन के एजेण्डा पर अहम स्थान रखती हैं

माँगपत्रक–2011 की पहली चार माँगों – न्यूनतम मज़दूरी, काम के घण्टे कम करने, ठेका के ख़ात्मे, काम की बेहतर तथा उचित स्थितियों की माँग और कार्यस्थल पर सुरक्षा और दुर्घटना की स्थिति में उचित मुआवज़ा – के बारे में विस्तार से जानने के लिए पढ़ें 'मज़दूर बिगुल' के अंक 1, 2, 3, 4 और 5 – सम्पादक

प्रवासी मज़दूर मज़दूरों की वह आबादी है जो या तो अपने स्थायी निवास से दूर रहकर काम करती है या जिसका कोई स्थायी निवास है ही नहीं।

मज़दूरों का प्रवासी होना ('माइग्रेशन', आप्रवास या प्रव्रजन) पूँजीवाद की आम परिघटना, लक्षण और परिणाम है। यूँ तो ज़्यादातर औद्योगिक मज़दूर या अन्य शहरी मज़दूर भी ऐसे ही लोग हैं जो (या जिनकी पूर्ववर्ती पीढ़ियाँ) कभी न कभी गाँव से प्रवासी होकर शहर आये थे। धीरे-धीरे वे किसी एक शहर या औद्योगिक क्षेत्र में क़ानूनी या ग़ैरक़ानूनी ढंग से बसायी गयी मज़दूर बस्ती में झुग्गी या कोठरी ख़रीदकर किराये पर रहने लगे। इनमें से कुछ कुशल या अर्द्धकुशल मज़दूर हो गये। कुछ के बी.पी.एल. राशन कार्ड और पहचानपत्र भी बन गये। कुछ के ई.एस.आई. कार्ड भी बन गये। हालाँकि ये सुविधाएँ भी बहुत कम को ही नसीब हुईं। छँटनी, तालाबन्दी या बिना किसी ठोस वजह के नौकरी से कभी भी निकाल दिये जाने की तलवार इनके सिर पर भी लटकती रहती है। लेकिन एक ठौर-ठिकाना और आसपास अपने ही जैसों के बीच जान-पहचान का दायरा ऐसे मज़दूरों को नयी नौकरी ढूँढ़ने में भी काफ़ी मदद करते हैं। रहने का कोई स्थायी ठौर और नौकरी का कोई सुनिश्चित बन्दोबस्त नहीं होने के कारण प्रवासी मज़दूर जीने और काम करने की सर्वाधिक असुरक्षित, अनिश्चित और नारकीय स्थितियों को झेलने के लिए अभिशप्त होते हैं। पूरी दुनिया में, उन्नत पूँजीवादी देशों से लेकर भारत जैसे पिछड़े पूँजीवादी देशों तक प्रवासी मज़दूरों की कमोबेश एक सी ही दुर्दशा है वे सबसे सस्ती दरों पर अपनी श्रम शक्ति बेचने वाले, सबसे नारकीय परिस्थितियों में रहने और काम करने वाले, सर्वाधिक असुरक्षित उजरती गुलाम होते हैं।

यूँ तो पूँजी हमेशा से लोगों को अपनी जगह-ज़मीन से दर-बदर करती रही है ताकि उनकी श्रम शक्ति को निचोड़कर वह लगातार अपनी वृद्धि कर सके। सामन्तवाद से पूँजीवाद में संक्रमण के साथ, ज़मींदार की ज़मीन से बँधे मज़दूर "मुक्त" होकर कारख़ानों के मज़दूर बने। छोटे मालिक किसान भी पूँजी की मार से उजड़ने लगे। उनमें से कुछ ग्रामीण सर्वहारा बने, कुछ शहरों में प्रवास करके औद्योगिक सर्वहारा बन गये और कुछ सीज़नल सा अस्थायी मज़दूर के तौर पर शहरों में आकर काम करने लगे। खेती-बाड़ी का पूँजीवादीकरण जहाँ-जहाँ सापेक्षत: तेज़ हुआ, वहाँ-वहाँ मज़दूरों की माँग बढ़ी, पर जल्दी ही मशीनीकरण ने उन्हें वहाँ भी काम से निकाल बाहर किया। 'जीवित श्रम' का स्थान 'मृत श्रम' ने ले लिया। यही प्रक्रिया शहरों में भी जारी रहती है। उत्पादन के किसी भी सेक्टर में नयी मशीनें आती हैं और मज़दूर काम से बाहर कर दिया जाता है। यही नहीं, मुनाफ़े की अन्धी हवस और पूँजीवादी उत्पादन की अराजकता जब अतिउत्पादन और मन्दी का दौर लाती है तो पूँजीपति पहला काम यही करता है कि छँटनी और तालाबन्दी करके मज़दूर को सड़क पर ढकेल देता है। बेघर-बेदर मज़दूर फिर किसी और उद्योग या इलाक़े में काम ढूँढ़ने निकल पड़ता है। इस तरह मज़दूर पिछड़े उत्पादन क्षेत्र (कृषि और छोटे उद्यमों) से उन्नत उत्पादन क्षेत्रों की ओर आप्रवास करता है और फिर अधिक मशीनीकरण वाले उन्नत क्षेत्रों से कम मशीनाकरण वाले उत्पादन क्षेत्रों की ओर जाता रहता है। बड़ी-बड़ी औद्योगिक अन्य निर्माण परियोजनाओं और खनन परियोजनाओं में लाखों की तादाद में मज़दूरों की ज़रूरत पड़ती है और प्रोजेक्ट ख़त्म होते ही यह सारी आबादी नये काम की तलाश में निकल पड़ती है। 'लार्सन एण्ड ट्यूब्रो' और 'नवयुग' जैसी पचासों कम्पनियाँ हैं जो कोई भी प्रोजेक्ट (जैसे 'दिल्ली मेट्रो' या कोई बाँध या फ़ैक्टरी या सड़क परियोजना) लेते समय हज़ारों (कभी-कभी लाखों) मज़दूर भरती करती हैं और प्रोजेक्ट समाप्त होते ही उन्हें निकला देती हैं। बिल्डर कम्पनियाँ भी इसी प्रकार काम करती हैं। मेण्टेनेंस जैसे काम करने वाली प्राइवेट कम्पनियाँ भी अपने 90-95 प्रतिशत मज़दूरों को (थोड़े से कुशल अनुभवी लोगों को ही एक हद तक स्थायित्व प्राप्त होता है) कभी स्थायी नहीं करतीं। जहाँ जैसा ठेका मिलता है, उसी हिसाब से निकालने और भर्ती करने का काम होता रहता है। इस तरह मज़दूरों की एक भारी आबादी कहीं स्थिर होकर रह नहीं पाती। जो सीज़नल मज़दूर कुछ दिनों के लिए गाँव से शहर आते है, उनका भी जीवन प्रवासी मज़दूरों का ही होता है।

काम की तलाश में लगातार नयी जगहों पर भटकते रहने और पूरी ज़िन्दगी अनिश्चितताओं से भरी रहने के कारण प्रवासी मज़दूरों की सौदेबाज़ी करने की ताक़त नगण्य होती है। वे दिहाड़ी, ठेका, कैजुअल या पीसरेट मज़दूर के रूप में सबसे कम मज़दूरी पर काम करते हैं। सामाजिक सुरक्षा का कोई भी क़ानूनी प्रावधान उनके ऊपर लागू नहीं हो पाता। कम ही ऐसा हो पाता है कि लगातार सालभर उन्हें काम मिल सके (कभी-कभी किसी निर्माण परियोजना में साल, दो साल, तीन साल वे लगातार काम करते भी हैं तो उसके बाद बेकार हो जाते हैं)। लम्बी-लम्बी अवधियों तक 'बेरोज़गारों की आरक्षित सेना' में शामिल होना या महज पेट भरने के लिए कम से कम मज़दूरी और अपमानजनक शर्तों पर कुछ काम करके अर्द्धबेरोज़गारी में छिपी बेरोज़गारी की स्थिति में दिन बिताना उनकी नियति होती है।

पिछले इक्कीस वर्षों से जारी उदारीकरण-निजीकरण का दौर लगातार मज़दूरी के बढ़ते औपचारिकीकरण, ठेकाकरण, दिहाड़ीकरण, 'कैजुअलीकरण' और 'पीसरेटीकरण' का दौर रहा है। नियमित/औपचारिक/स्थायी नौकरी वाले मज़दूरों की तादाद घटती चली गयी है, यूनियनों का रहा-सहा आधार भी सिकुड़ गया है। औद्योगिक ग्रामीण मज़दूरों की कुल आबादी का 95 प्रतिशत से भी अधिक असंगठित/अनौपचारिक है, यूनियनों के दायरे के बाहर है (या एक हद तक है भी तो महज़ औपचारिक तौर पर) और उसकी सामूहिक सौदेबाज़ी की ताक़त नगण्य हो गयी है। ऐसे मज़दूरों का बड़ा हिस्सा किसी भी तरह के रोज़गार की तलाश में लगातार यहाँ-वहाँ भागता रहता है। उसका स्थायी निवास या तो है ही नहीं या है भी, तो वह वहाँ से दूर कहीं भी काम करने को बाध्य है। तात्पर्य यह कि नवउदारवाद ने मज़दूरों को ज़्यादा से ज़्यादा यहाँ-वहाँ भटकने के लिए मजबूर करके प्रवासी मज़दूरों की संख्या बहुत अधिक बढ़ा दी है।

प्रवासी मज़दूर वे सच्चे सर्वहारा हैं, जिनके पास खोने को कुछ भी नहीं होता। सचमुच उनका कोई देश, शहर, इलाक़ा नहीं होता। अपनी श्रमशक्ति बेचकर वे जीते हैं क्योंकि उनके पास ज़्यादातर, रस्मी तौर पर भी और कुछ भी नहीं होता। उनकी संख्या आज भारत में भी सबसे अधिक है और पूरी दुनिया में भी। हर जगह उनकी एक समान स्थिति है। आप्रवासन केवल एक देश के भीतर नहीं है, बल्कि देश के बाहर भी होता है। हालाँकि साम्राज्यवादी देश नहीं चाहते कि बड़े पैमाने पर पिछड़े देशों के मज़दूर उनके देशों में जायें, क्योंकि तब उन्हें उनको (अपने देश के मज़दूरों के मुक़ाबले काफ़ी कम होते हुए भी) ज़्यादा मज़दूरी देनी पड़ती है। इसलिए वे चाहते हैं कि पिछड़े देशों में ही पूँजी लगातार सस्ती से सस्ती दरों पर श्रमशक्ति को निचोड़ा जाये। ऐसी बहुतेरी तमाम प्रत्यक्ष-परोक्ष बन्दिशों के बावजूद जो भारतीय मज़दूर दूसरे देशों में जाकर काम करते हैं उन्हें अपने परिवारों को पैसे भेजने के लिए नारकीय गुलामों का जीवन बिताना पड़ता है। उन्हें भेजी हुई विदेशी मुद्रा से भारत सरकार को अपने विदेश व्यापार के चालू खाते और विदेशी मुद्रा भण्डार की स्थिति मज़बूत करने में सर्वाधिक मदद मिलती है, लेकिन भारतीय कामगारों के हितों की रक्षा के लिए यह एक भी क़दम नहीं उठाती क्योंकि यह सरकार उन भारतीय पूँजीपतियों की मैनेजिंग कमेटी है जो विश्व पैमाने की लूट में साम्राज्यवादियों के कनिष्ठ साझीदार हैं।

दिलचस्प बात यह है कि भारत में भी नेपाल और बंगलादेश से आकर जो लाखों ग़रीब मेहनतकश महज़ दो जून की रोटी के लिए काम करते हैं, उनके लिए श्रम क़ानूनों का कोई मतलब नहीं होता, सबसे कम मज़दूरी पर वे सबसे कठिन व अपमानजनक काम करते हैं, सामूहिक सौदेबाज़ी की उनकी कोई ताक़त नहीं होती, वे नारकीय जीवन बिताते हैं तथा अक्सर घृणित नस्ली, धार्मिक और अन्धराष्ट्रवादी पूर्वाग्रहों का सामना करते हैं। पूँजीपति इसका लाभ उठाकर उनका और अधिक शोषण करते हैं और भारतीय मज़दूरों के दिलों में यह बात बैठाने की कोशिश करते हैं कि इन "बाहरी लोगों" की वजह से उनके रोज़गार के अवसर कम हो रहे हैं जबकि सच्चाई यह है कि या तो मज़दूरों पर दबाव बनाने के लिए रोज़गार की कमी का हौव्वा खड़ा किया जाता है या फिर मन्दी और बेरोज़गारी की जो भी स्थिति होती है उसका कारण कामगारों की संख्या की बहुतायत नहीं बल्कि पूँजीवादी उत्पादन और विनिमय प्रणाली के ढाँचे में मौजूद होता है। पूँजीपति वर्ग अपने दुष्प्रचार के द्वारा मज़दूरों की श्रम शक्ति कम दरों पर ख़रीदने के साथ ही मेहनतकशों की व्यापक एकजुटता को तोड़ने और उन्हें आपस में ही लड़ाने का भी काम करता है। जिन हालात का सामना नेपाली और बंगलादेशी मज़दूरों के भारत में करना पड़ता है, वैसे ही हालात का सामना भारतीय मज़दूरों को ब्रिटेन, इटली, जर्मनी, कनाडा, अमेरिका, आस्ट्रेलिया और खाड़ी के देशों में करना पड़ता है। समस्या केवल पड़ोसी देशो से भारत आने वाले या भारत से बाहर जाकर काम करने वाले भारतीय प्रवासी कामगारों की ही नहीं है। देश के भीरत भी कभी मुम्बई में, तो कभी दिल्ली में, तो कभी पंजाब में, बाहर से आकर काम करने वाले प्रवासी कामगारों के ख़िलाफ़ नफ़रत की लहर भड़काई जाती है। इसका फ़ायदा उठाकर पूँजीपति छँटनी-तालाबन्दी-बेरोज़गारी से क्रुद्ध मज़दूरों के आवेश की दिशा मोड़ देते हैं और साथ ही सस्ती दरों पर मज़दूरी के लिए सौदेबाज़ी में आयी स्थिति मजबूत कर लेते हैं। साथ ही, क्षेत्रीय पूँजीवादी पार्टियाँ भी बाहरी-भीतरी का मुद्दा भड़काकर अपना चुनावी गोट लाल करती रहती हैं।

प्रवासी मज़दूरों की विराट शक्ति एक सोये हुए महाबली की ताक़त है। यह एक ऐसी बिखरी हुई ताक़त है जो यदि इकट्ठा हो जाये तो चक्रवाती बवण्डर की ताक़त बन सकती है। लेकिन यह "यदि" एक बड़ा प्रश्न है, क्योंकि बिखरे होने और प्राय: आर्थिक संघर्षों के लिए ऐक्यबद्ध न हो पाने के कारण, प्रवासी मज़दूर असंगठित सर्वहारा की वह क़तार है जिसकी वर्गचेतना अत्यधिक पिछड़ी होती है। मज़दूरों के इस तबक़े को उसके राजनीतिक अधिकारों से परिचित कराने तथा आर्थिक-राजनीतिक संघर्षों के लिए लामबन्द करने की प्रक्रिया लम्बी और श्रमसाध्य होगी। पर सर्वहारा वर्ग के अगुवा दस्तों को यह करना ही होगा। 'भारत के मज़दूरों के माँगपत्रक 2011' में प्रवासी मज़दूरों से सम्बन्धित जो विशेष माँगें रखी गयी हैं, उनका दायरा जनवादी अधिकारों का दायरा है। यह एक शुरुआती क़दम है। प्रवासी मज़दूरों के लिए हम सबसे पहले वे सामान्य माँगें उठा रहे हैं, जिनका वायदा या तो इस देश की सरकार भी करती है या जो बुर्जुआ जनवाद के आम सैद्धान्तिक वायदों के दायरे में आते हैं। आज प्रवासी मज़दूरों को ये माँगें भी बड़ी लग सकती हैं। उनके बीच लगातार प्रचार का काम भी काफ़ी मेहनत की माँग करता है। पर एक बार यदि इन माँगों को समझकर प्रवासी मज़दूर एकजुट होने लगे और एक बार यदि व्यापक मज़दूर आबादी भी इन माँगों को अपनी माँगें समझने लगी तो फिर आगे बढ़ते जाने का सिलसिला रुकेगा नहीं। ये कुछ प्रारम्भिक स्तर की राजनीतिक माँगें हैं, पर इनमें व्यापक

(पेज 15 पर जारी)

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी कात्यायनी सिन्हा द्वारा 69 ए-1, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ-226006 से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा मल्टीमीडियम, 310, संजय गांधीपुरम, फ़ैज़ाबाद रोड, लखनऊ से मुद्रित। सम्पादक : सुखविन्दर, अभिनव ● सम्पादकीय पता : 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006